॥ श्रीः ॥

श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्

(हिन्दी-अनुवादसहित)

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव ॥

गीताप्रेस, गोरखपुर

॥ श्रीः ॥

श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्

(हिन्दी-अनुवादसहित)



गीताप्रेस, गोरखपुर

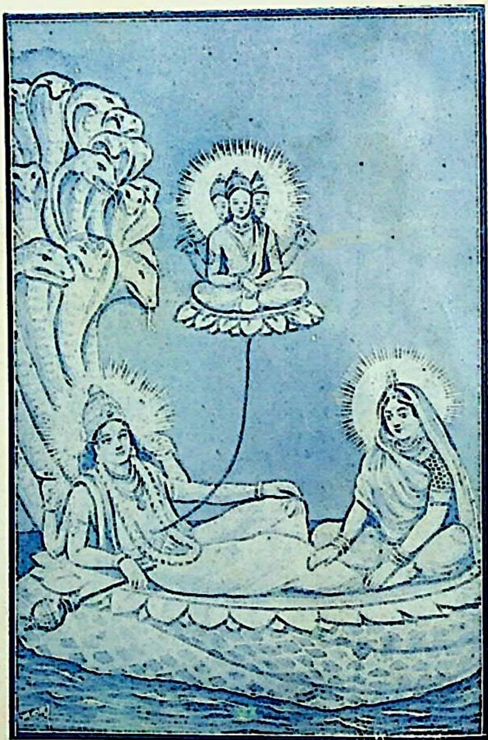
मुद्रक तथा प्रकाशक—घनश्यामदास जालान, गीताप्रेस, गोरखपुर

सं० २००० से २००१ तक १५,२५०
सं० २००४ तृतीय संस्करण ५,०००
सं० २००६ चतुर्थ संस्करण १०,०००
कुल ३०,२५०

मूल्य -)॥ सजिल्द =)॥



श्रीविष्णु



श्रीशेषशायी

ॐ

श्रीपरमात्मने नमः

अथ श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्

यस्य स्मरणमात्रेण जन्मसंसारबन्धनात् ।
विमुच्यते नमस्तस्मै विष्णवे प्रभविष्णवे ॥

जिनके स्मरण करनेमात्रसे मनुष्य जन्म-मृत्युरूप संसारबन्धनसे मुक्त हो जाता है, सबकी उत्पत्तिके कारण-भूत उन भगवान् विष्णुको नमस्कार है ।

नमः समस्तभूतानामादिभूताय भूभृते ।
अनेकरूपरूपाय विष्णवे प्रभविष्णवे ॥

सम्पूर्ण प्राणियोंके आदिभूत, पृथ्वीको धारण करनेवाले, अनेक रूपधारी और सर्वसमर्थ भगवान् विष्णुको प्रणाम है ।

वैशम्पायन उवाच

श्रुत्वा धर्मानशेषेण पावनानि च सर्वशः ।
युधिष्ठिरः शान्तनवं पुनरेवाभ्यभाषत ॥१॥

वैशम्पायनजी कहते हैं—राजन्! धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिरने सम्पूर्ण विधिरूप धर्म तथा पापोंका क्षय करनेवाले धर्मरहस्योंको सब प्रकार सुनकर शान्तनुपुत्र भीष्मसे फिर पूछा ॥ १ ॥

युधिष्ठिर उवाच

किमेकं दैवतं लोके किं वाप्येकं परायणम् ।
स्तुवन्तःकं कमर्चन्तःप्राप्नुयुर्मानवाःशुभम् ॥२॥

युधिष्ठिर बोले—समस्त जगत्में एक ही देव कौन है? तथा इस लोकमें एक ही परम आश्रय-स्थान कौन है? जिसका साक्षात्कार कर लेनेपर जीवकी अविद्यारूप हृदय-ग्रन्थि टूट जाती है, सब संशय नष्ट हो जाते हैं तथा सम्पूर्ण कर्म क्षीण हो जाते हैं। किस देवकी स्तुति—गुण-कीर्तन

करनेसे तथा किस देवका नाना प्रकारसे बाह्य और आन्तरिक पूजन करनेसे मनुष्य कल्याणकी प्राप्ति कर सकते हैं ? ॥२॥

को धर्मः सर्वधर्माणां भवतः परमो मतः ।
किं जपन्मुच्यते जन्तुर्जन्मसंसारबन्धनात् ॥३॥

आप समस्त धर्मोंमें पूर्वोक्त लक्षणोंसे युक्त किस धर्मको परम श्रेष्ठ मानते हैं ? तथा किसका जप करनेसे जननधर्मा जीव जन्म-मरणरूप संसार-बन्धनसे मुक्त हो जाता है ॥३॥

भीष्म उवाच

जगत्प्रभुं देवदेवमनन्तं पुरुषोत्तमम् ।
स्तुवन्नामसहस्रेण पुरुषः सततोत्थितः ॥४॥

भीष्मजीने कहा—स्थावर-जङ्गमरूप संसारके स्वामी, ब्रह्मादि देवोंके देव, देश, काल और वस्तुसे अपरिच्छिन्न, क्षर-अक्षरसे श्रेष्ठ पुरुषोत्तमका सहस्रनामोंके द्वारा निरन्तर तत्पर रहकर गुण-संकीर्तन करनेसे पुरुष सब दुःखोंसे पार हो जाता है ॥ ४ ॥

तमेव चार्चयन्नित्यं भक्त्या पुरुषमव्ययम् ।
ध्यायन्स्तुवन्नमस्यंश्च यजमानस्तमेव च ॥५॥

तथा उसी विनाशरहित पुरुषका सब समय भक्तिसे युक्त होकर पूजन करनेसे, उसीका ध्यान करनेसे तथा पूर्वोक्त प्रकारसे सहस्रनामोंके द्वारा स्तवन एवं नमस्कार करनेसे पूजा करनेवाला सब दुःखोंसे छूट जाता है ॥५॥

अनादिनिधनं विष्णुं सर्वलोकमहेश्वरम् ।
लोकाध्यक्षं स्तुवन्नित्यं सर्वदुःखातिगो भवेत् ॥६॥

उस जन्म-मृत्यु आदि छः भावविकारोंसे रहित, सर्वव्यापक, सम्पूर्ण लोकोंके महेश्वर, लोकाध्यक्ष देवकी निरन्तर स्तुति करनेसे मनुष्य सब दुःखोंसे पार हो जाता है ॥ ६ ॥

ब्रह्मण्यं सर्वधर्मज्ञं लोकानां कीर्तिवर्धनम् ।
लोकनाथं महद्भूतं सर्वभूतभवोद्भवम् ॥७॥

जगत्‌की रचना करनेवाले ब्रह्माके तथा ब्राह्मण, तप और श्रुतिके हितकारी, सब धर्मोंको जाननेवाले, प्राणियोंकी कीर्तिको (उनमें अपनी शक्तिसे प्रविष्ट होकर) बढ़ानेवाले, सम्पूर्ण लोकोंके स्वामी, समस्त भूतोंके उत्पत्ति-स्थान एवं संसारके कारणरूप परमेश्वरका स्तवन करनेसे मनुष्य सब दुःखोंसे छूट जाता है ॥ ७ ॥

एष मे सर्वधर्माणां धर्मोऽधिकतमो मतः ।
यद्भक्त्या पुण्डरीकाक्षं स्तवैरर्चेन्नरः सदा ॥८॥

विधिरूप सम्पूर्ण धर्मोंमें मैं इसी धर्मको सबसे बड़ा मानता हूँ कि मनुष्य अपने हृदयकमलमें विराजमान कमलनयन भगवान् वासुदेवका भक्तिपूर्वक तत्परतासहित गुण-संकीर्तनरूप स्तुतियोंसे सदा अर्चन करे ॥ ८ ॥

परमं यो महत्तेजः परमं यो महत्तपः ।
परमं यो महद्ब्रह्म परमं यः परायणम् ॥९॥

जो देव परम तेज, परम तप, परम ब्रह्म और परम परायण है, वही समस्त प्राणियोंकी परम गति है ॥ ९ ॥

पवित्राणां पवित्रं यो मङ्गलानां च मङ्गलम् ।
दैवतं देवतानां च भूतानां योऽव्ययः पिता ॥१०॥
यतः सर्वाणि भूतानि भवन्त्यादियुगागमे ।
यस्मिंश्च प्रलयं यान्ति पुनरेव युगक्षये ॥११॥
तस्य लोकप्रधानस्य जगन्नाथस्य भूपते ।
विष्णोर्नामसहस्रं मे शृणु पापभयापहम् ॥१२॥

पृथ्वीपते ! जो पवित्र करनेवाले तीर्थादिकोंमें परम पवित्र है, मङ्गलोंका मङ्गल है, देवोंका देव है तथा जो भूत-प्राणियोंका अविनाशी पिता है, कल्पके आदिमें जिससे सम्पूर्ण भूत उत्पन्न होते हैं और फिर युगका क्षय होनेपर महाप्रलयमें जिसमें वे विलीन हो जाते हैं, उस लोकप्रधान, संसारके स्वामी, भगवान् विष्णुके पाप और संसारभयको दूर करनेवाले हजार नामोंको मुझसे सुन ॥ १०—१२ ॥

यानि नामानि गौणानि विख्यातानि महात्मनः ।
ऋषिभिः परिगीतानि तानि वक्ष्यामि भूतये ।१३।

जो नाम गुणके कारण प्रवृत्त हुए हैं, उनमेंसे जो-जो प्रसिद्ध हैं और मन्त्रद्रष्टा मुनियोंद्वारा जो जहाँ-तहाँ सर्वत्र भगवत्कथाओंमें गाये गये हैं, उस अचिन्त्यप्रभाव महात्माके उन समस्त नामोंको पुरुषार्थ-सिद्धिके लिये वर्णन करता हूँ ॥ १३ ॥

ॐ विश्वं विष्णुर्वषट्कारो भूतभव्यभवत्प्रभुः ।
भूतकृद् भूतभृद्भावो भूतात्मा भूतभावनः ।१४।

ॐसच्चिदानन्दस्वरूप, १ **विश्वम्**—समस्त जगत्के कारणरूप, २ **विष्णुः**—सर्वव्यापी, ३ **वषट्कारः**—जिनके उद्देश्यसे यज्ञमें वषट् क्रिया की जाती है, ऐसे यज्ञस्वरूप, ४ **भूतभव्यभवत्प्रभुः**—भूत, भविष्यत् और वर्तमानके स्वामी, ५ **भूतकृत्**—रजोगुणका आश्रय लेकर ब्रह्मारूपसे सम्पूर्ण भूतोंकी रचना करनेवाले, ६ **भूतभृत्**—सत्त्वगुणका आश्रय लेकर सम्पूर्ण भूतोंका पालन-पोषण करनेवाले, ७ **भावः**—नित्यस्वरूप होते हुए भी स्वतः उत्पन्न होनेवाले, ८ **भूतात्मा**—सम्पूर्ण भूतोंके आत्मा अर्थात् अन्तर्यामी, ९ **भूतभावनः**—भूतोंकी उत्पत्ति और वृद्धि करनेवाले ॥१४॥

पूतात्मा परमात्मा च मुक्तानां परमा गतिः ।
अव्ययः पुरुषः साक्षी क्षेत्रज्ञोऽक्षर एव च ॥१५॥

१० **पूतात्मा**—पवित्रात्मा, ११ **परमात्मा**—परमश्रेष्ठ नित्य शुद्ध-बुद्ध-मुक्तस्वभाव, १२ **मुक्तानां परमा गतिः**—मुक्त पुरुषोंकी सर्वश्रेष्ठ गतिस्वरूप, १३ **अव्ययः**—कभी विनाशको प्राप्त न होनेवाले, १४ **पुरुषः**—पुर अर्थात् शरीरमें शयन करनेवाले, १५ **साक्षी**—बिना किसी व्यवधानके सब कुछ देखनेवाले, १६ **क्षेत्रज्ञः**—क्षेत्र अर्थात् समस्त प्रकृतिरूप शरीरको पूर्णतया जाननेवाले, १७ **अक्षरः**—कभी क्षीण न होनेवाले ॥ १५ ॥

योगो योगविदां नेता प्रधानपुरुषेश्वरः ।
नारसिंहवपुः श्रीमान्केशवः पुरुषोत्तमः ॥१६॥

१८ **योगः**—मनसहित सम्पूर्ण ज्ञानेन्द्रियोंके निरोधरूप योगसे प्राप्त होनेवाले, १९ **योगविदां नेता**—योगको जाननेवाले भक्तोंके योगक्षेमादिका निर्वाह करनेमें अग्रसर रहनेवाले, २० **प्रधानपुरुषेश्वरः**—प्रकृति और पुरुषके

स्वामी, २१ **नारसिंहवपुः**—मनुष्य और सिंह दोनोंके जैसा शरीर धारण करनेवाले नरसिंहरूप, २२ **श्रीमान्**—वक्षःस्थलमें सदा श्रीको धारण करनेवाले, २३ **केशवः**—(क) ब्रह्मा, (अ) विष्णु और (ईश) महादेव—इस प्रकार त्रिमूर्तिस्वरूप, २४ **पुरुषोत्तमः**—क्षर और अक्षर इन दोनोंसे सर्वथा उत्तम ॥ १६ ॥

सर्वः शर्वः शिवः स्थाणुर्भूतादिर्निधिरव्ययः ।
सम्भवो भावनो भर्ता प्रभवः प्रभुरीश्वरः ॥१७॥

२५ **सर्वः**—असत् और सत्—सबकी उत्पत्ति, स्थिति और प्रलयके स्थान, २६ **शर्वः**—सारी प्रजाका प्रलयकालमें संहार करनेवाले, २७ **शिवः**—तीनों गुणोंसे परे कल्याणस्वरूप, २८ **स्थाणुः**—स्थिर, २९ **भूतादिः**—भूतोंके आदि कारण, ३० **निधिरव्ययः**—प्रलयकालमें सब प्राणियोंके लीन होनेके अविनाशी स्थानरूप, ३१ **सम्भवः**—अपनी इच्छासे भली प्रकार प्रकट होनेवाले, ३२ **भावनः**—समस्त भोक्ताओंके फलोंको उत्पन्न करनेवाले, ३३ **भर्ता**—सबका

भरण करनेवाले, ३४ प्रभवः—उत्कृष्ट (दिव्य) जन्मवाले, ३५ प्रभुः—सबके स्वामी, ३६ ईश्वरः—उपाधिरहित ऐश्वर्यवाले ॥ १७ ॥

स्वयम्भूः शम्भुरादित्यः पुष्कराक्षो महास्वनः ।
अनादिनिधनो धाता विधाता धातुरुत्तमः ॥१८॥

३७ स्वयम्भूः—स्वयं उत्पन्न होनेवाले, ३८ शम्भुः—भक्तोंके लिये सुख उत्पन्न करनेवाले, ३९ आदित्यः—द्वादश आदित्योंमें विष्णुनामक आदित्य, ४० पुष्कराक्षः—कमलके समान नेत्रवाले, ४१ महास्वनः—वेदरूप अत्यन्त महान् घोषवाले, ४२ अनादिनिधनः—जन्म-मृत्युसे रहित, ४३ धाता—विश्वको धारण करनेवाले, ४४ विधाता—कर्म और उसके फलोंकी रचना करनेवाले, ४५ धातुरुत्तमः—कार्यकारणरूप सम्पूर्ण प्रपञ्चको धारण करनेवाले एवं सर्वश्रेष्ठ ॥ १८ ॥

अप्रमेयो हृषीकेशः पद्मनाभोऽमरप्रभुः ।
विश्वकर्मा मनुस्त्वष्टा स्थविष्ठःस्थविरो ध्रुवः॥१९॥

४६ अप्रमेयः–प्रमाणादिसे जाननेमें न आ सकनेवाले, ४७ हृषीकेशः–इन्द्रियोंके स्वामी, ४८ पद्मनाभः–जगत्‌के कारणरूप कमलको अपनी नाभिमें स्थान देनेवाले, ४९ अमरप्रभुः–देवताओंके स्वामी, ५० विश्वकर्मा–सारे जगत्‌की रचना करनेवाले, ५१ मनुः–प्रजापति मनुरूप, ५२ त्वष्टा–संहारके समय सम्पूर्ण प्राणियोंको क्षीण करनेवाले, ५३ स्थविष्ठः–अत्यन्त स्थूल, ५४ स्थविरो ध्रुवः–अति प्राचीन एवं अत्यन्त स्थिर ॥ १९ ॥

अग्राह्यः शाश्वतः कृष्णो लोहिताक्षः प्रतर्दनः ।
प्रभूतस्त्रिककुब्धाम पवित्रं मङ्गलं परम् ॥२०॥

५५ अग्राह्यः–मनसे ग्रहण न किये जा सकनेवाले, ५६ शाश्वतः–सब कालमें स्थित रहनेवाले, ५७ कृष्णः–सबके चित्तको बलात्कारसे अपनी ओर आकर्षित करनेवाले परमानन्दस्वरूप, ५८ लोहिताक्षः–लाल नेत्रोंवाले, ५९ प्रतर्दनः–प्रलयकालमें प्राणियोंका संहार करनेवाले, ६० प्रभूतः–ज्ञान, ऐश्वर्य आदि गुणोंसे सम्पन्न,

६१ त्रिककुब्धाम–ऊपर-नीचे और मध्यभेदवाली तीनों दिशाओंके आश्रयरूप, ६२ पवित्रम्–सबको पवित्र करने-वाले, ६३ मङ्गलं परम्–परम मङ्गल ॥ २० ॥

ईशानः प्राणदः प्राणो ज्येष्ठः श्रेष्ठः प्रजापतिः ।
हिरण्यगर्भो भूगर्भो माधवो मधुसूदनः ॥२१॥

६४ ईशानः–सर्व भूतोंके नियन्ता, ६५ प्राणदः–सबके प्राण संशोधन करनेवाले, ६६ प्राणः–सबको जीवित रखनेवाले प्राणस्वरूप, ६७ ज्येष्ठः–सबके कारण होनेसे सबसे बड़े, ६८ श्रेष्ठः–सबमें उत्कृष्ट होनेसे परम श्रेष्ठ, ६९ प्रजापतिः–ईश्वररूपसे सारी प्रजाओंके मालिक, ७० हिरण्यगर्भः–ब्रह्माण्डरूप हिरण्मय अण्डके भीतर ब्रह्मारूपसे व्याप्त होनेवाले, ७१ भूगर्भः–पृथ्वीको गर्भमें रखनेवाले, ७२ माधवः–लक्ष्मीके पति, ७३ मधुसूदनः–मधुनामक दैत्यको मारनेवाले ॥ २१ ॥

ईश्वरो विक्रमी धन्वी मेधावी विक्रमः क्रमः ।
अनुत्तमो दुराधर्षः कृतज्ञः कृतिरात्मवान् ॥२२॥

७४ **ईश्वरः**—सर्वशक्तिमान् ईश्वर, ७५ **विक्रमी**—शूरवीरतासे युक्त, ७६ **धन्वी**—शार्ङ्गधनुष रखनेवाले, ७७ **मेधावी**—अतिशय बुद्धिमान्, ७८ **विक्रमः**—गरुड़ पक्षीद्वारा गमन करनेवाले, ७९ **क्रमः**—क्रम-विस्तारके कारण, ८० **अनुत्तमः**—सर्वोत्कृष्ट, ८१ **दुराधर्षः**—किसीसे भी तिरस्कृत न हो सकनेवाले, ८२ **कृतज्ञः**—अपने निमित्तसे थोड़ा-सा भी त्याग किये जानेपर उसे बहुत माननेवाले यानी पत्र-पुष्पादि थोड़ी-सी वस्तु समर्पण करनेवालोंको भी मोक्ष दे देनेवाले, ८३ **कृतिः**—पुरुष-प्रयत्नके आधाररूप, ८४ **आत्मवान्**—अपनी ही महिमामें स्थित ॥ २२ ॥

सुरेशः शरणं शर्म विश्वरेताः प्रजाभवः ।
अहः संवत्सरो व्यालः प्रत्ययः सर्वदर्शनः॥२३॥

८५ **सुरेशः**—देवताओंके स्वामी, ८६ **शरणम्**—दीन-दुखियोंके परम आश्रय, ८७ **शर्म**—परमानन्दस्वरूप, ८८ **विश्वरेताः**—विश्वके कारण, ८९ **प्रजाभवः**—सारी प्रजाको उत्पन्न करनेवाले, ९० **अहः**—प्रकाशरूप, ९१

संवत्सरः–कालस्वरूपसे स्थित, ९२ व्यालः–सर्पके समान ग्रहण करनेमें न आ सकनेवाले, ९३ प्रत्ययः–उत्तम बुद्धिसे जाननेमें आनेवाले, ९४ सर्वदर्शनः–सबके द्रष्टा ॥ २३ ॥

अजः सर्वेश्वरः सिद्धः सिद्धिः सर्वादिरच्युतः।
वृषाकपिरमेयात्मा सर्वयोगविनिःसृतः ॥२४॥

९५ अजः–जन्मरहित, ९६ सर्वेश्वरः–समस्त ईश्वरोंके भी ईश्वर, ९७ सिद्धः–नित्यसिद्ध, ९८ सिद्धिः–सबके फलरूप, ९९ सर्वादिः–सब भूतोंके आदि कारण, १०० अच्युतः–अपनी स्वरूप-स्थितिसे कभी त्रिकालमें भी च्युत न होनेवाले, १०१ वृषाकपिः–धर्म और वराहरूप, १०२ अमेयात्मा–अप्रमेयस्वरूप, १०३ सर्वयोगविनिःसृतः–नाना प्रकारके शास्त्रोक्त साधनोंसे जाननेमें आनेवाले ॥ २४ ॥

वसुर्वसुमनाः सत्यः समात्मासम्मितः समः।
अमोघः पुण्डरीकाक्षो वृषकर्मा वृषाकृतिः ॥२५॥

१०४ वसुः—सब भूतोंके वासस्थान, १०५ वसुमनाः—उदार मनवाले, १०६ सत्यः—सत्यस्वरूप, १०७ समात्मा—सम्पूर्ण प्राणियोंमें एक आत्मारूपसे विराजनेवाले, १०८ असम्मितः—समस्त पदार्थोंसे मापे न जा सकनेवाले, १०९ समः—सब समय समस्त विकारोंसे रहित, ११० अमोघः—भक्तोंके द्वारा पूजन, स्तवन अथवा स्मरण किये जानेपर उन्हें वृथा न करके पूर्णरूपसे उनका फल प्रदान करनेवाले, १११ पुण्डरीकाक्षः—कमलके समान नेत्रोंवाले, ११२ वृषकर्मा—धर्ममय कर्म करनेवाले, ११३ वृषाकृतिः—धर्मकी स्थापना करनेके लिये विग्रह धारण करनेवाले ॥ २५ ॥

रुद्रो बहुशिरा बभ्रुर्विश्वयोनिः शुचिश्रवाः ।
अमृतः शाश्वतस्थाणुर्वरारोहो महातपाः ॥२६॥

११४ रुद्रः—दुःख या दुःखके कारणको दूर भगा देनेवाले, ११५ बहुशिराः—बहुत-से सिरोंवाले, ११६ बभ्रुः—लोकोंका भरण करनेवाले, ११७ विश्वयोनिः—

विश्वको उत्पन्न करनेवाले, ११८ शुचिश्रवाः—पवित्र कीर्तिवाले, ११९ अमृतः—कभी न मरनेवाले, १२० शाश्वतस्थाणुः—नित्य—सदा एकरस रहनेवाले एवं स्थिर, १२१ वरारोहः—आरूढ़ होनेके लिये परम उत्तम अपुनरावृत्तिस्थानरूप, १२२ महातपाः—प्रताप (प्रभाव) रूप महान् तपवाले ॥ २६ ॥

सर्वगः सर्वविद्भानुर्विष्वक्सेनो जनार्दनः ।
वेदो वेदविदव्यङ्गो वेदाङ्गो वेदवित्कविः ॥२७॥

१२३ सर्वगः—कारणरूपसे सर्वत्र व्याप्त रहनेवाले, १२४ सर्वविद्भानुः—सब कुछ जाननेवाले तथा प्रकाशरूप, १२५ विष्वक्सेनः—युद्धके लिये की हुई तैयारीमात्रसे ही दैत्यसेनाको तितर-बितर कर डालनेवाले, १२६ जनार्दनः—भक्तोंके द्वारा अभ्युदय—निःश्रेयसरूप परम पुरुषार्थकी याचना किये जानेवाले, १२७ वेदः—वेदरूप, १२८ वेदवित्—वेद तथा वेदके अर्थको यथावत् जाननेवाले, १२९ अव्यङ्गः—ज्ञानादिसे परिपूर्ण अर्थात् किसी प्रकार

अधूरे न रहनेवाले सर्वाङ्गपूर्ण, १३० वेदाङ्गः—वेदरूप अङ्गोंवाले, १३१ वेदवित्—वेदोंको विचारनेवाले, १३२ कविः—सर्वज्ञ ॥ २७ ॥

लोकाध्यक्षः सुराध्यक्षो धर्माध्यक्षः कृताकृतः ।
चतुरात्मा चतुर्व्यूहश्चतुर्दंष्ट्रश्चतुर्भुजः ॥२८॥

१३३ लोकाध्यक्षः—समस्त लोकोंके अधिपति, १३४ सुराध्यक्षः—देवताओंके अध्यक्ष, १३५ धर्माध्यक्षः—अनुरूप फल देनेके लिये धर्म और अधर्मका निर्णय करनेवाले, १३६ कृताकृतः—कार्यरूपसे कृत और कारणरूपसे अकृत, १३७ चतुरात्मा—सृष्टिकी उत्पत्ति आदिके लिये चार पृथक् मूर्तियोंवाले, १३८ चतुर्व्यूहः—उत्पत्ति, स्थिति, नाश और रक्षारूप चार व्यूहवाले, १३९ चतुर्दंष्ट्रः—चार दाढ़ोंवाले नरसिंहरूप, १४० चतुर्भुजः—चार भुजाओंवाले वैकुण्ठवासी भगवान् विष्णु ॥ २८ ॥

भ्राजिष्णुर्भोजनं भोक्ता सहिष्णुर्जगदादिजः ।
अनघो विजयो जेता विश्वयोनिः पुनर्वसुः ॥२९॥

१४१ भ्राजिष्णुः—एकरस प्रकाशस्वरूप, १४२ भोजनम्—ज्ञानियोंद्वारा भोगनेयोग्य अमृतस्वरूप, १४३ भोक्ता—पुरुषरूपसे भोक्ता, १४४ सहिष्णुः—सहनशील, १४५ जगदादिजः—जगत्के आदिमें हिरण्यगर्भरूपसे स्वयं उत्पन्न होनेवाले, १४६ अनघः—पापरहित, १४७ विजयः—ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य आदि गुणोंमें सबसे बढ़कर, १४८ जेता—स्वभावसे ही समस्त भूतोंको जीतनेवाले, १४९ विश्वयोनिः—प्रकृतिस्वरूप, १५० पुनर्वसुः—पुनः-पुनः शरीरोंमें आत्मरूपसे बसनेवाले ॥ २९ ॥

उपेन्द्रो वामनः प्रांशुरमोघः शुचिरूर्जितः ।
अतीन्द्रः संग्रहः सर्गो धृतात्मा नियमो यमः ॥ ३० ॥

१५१ उपेन्द्रः-इन्द्रको अनुजरूपसे प्राप्त होनेवाले, १५२ वामनः—वामनरूपसे अवतार लेनेवाले, १५३ प्रांशुः—तीनों लोकोंको लाँघनेके लिये त्रिविक्रमरूपसे ऊँचे होनेवाले, १५४ अमोघः—अव्यर्थ चेष्टावाले, १५५ शुचिः—स्मरण, स्तुति और पूजन करनेवालोंको पवित्र कर देनेवाले, १५६ ऊर्जितः—अत्यन्त बलशाली, १५७ अतीन्द्रः—

स्वयंसिद्ध ज्ञान-ऐश्वर्यादिके कारण इन्द्रसे भी बढ़े-चढ़े हुए, १५८ संग्रहः—प्रलयके समय सबको समेट लेनेवाले, १५९ सर्गः—सृष्टिके कारणरूप, १६० धृतात्मा—जन्मादिसे रहित रहकर स्वेच्छासे स्वरूप धारण करनेवाले, १६१ नियमः—प्रजाको अपने-अपने अधिकारोंमें नियमित करनेवाले, १६२ यमः—अन्तःकरणमें स्थित होकर नियमन करनेवाले ॥३०॥

वेद्यो वैद्यः सदायोगी वीरहा माधवो मधुः ।
अतीन्द्रियो महामायो महोत्साहो महाबलः॥३१॥

१६३ वेद्यः—कल्याणकी इच्छावालोंके द्वारा जानने योग्य, १६४ वैद्यः—सब विद्याओंके जाननेवाले, १६५ सदायोगी—सदा योगमें स्थित रहनेवाले, १६६ वीरहा—धर्मकी रक्षाके लिये असुर योद्धाओंको मार डालनेवाले, १६७ माधवः—विद्याके स्वामी, १६८ मधुः—अमृतकी तरह सबको प्रसन्न करनेवाले, १६९ अतीन्द्रियः-इन्द्रियोंसे सर्वथा अतीत, १७० महामायः—मायावियोंपर भी माया डालनेवाले महान् मायावी, १७१ महोत्साहः—जगत्की

उत्पत्ति, स्थिति और प्रलयके लिये तत्पर रहनेवाले परम उत्साही, १७२ महाबलः—महान् बलशाली ॥ ३१ ॥

महाबुद्धिर्महावीर्यो महाशक्तिर्महाद्युतिः ।
अनिर्देश्यवपुः श्रीमानमेयात्मा महाद्रिधृक् ।३२।

१७३ महाबुद्धिः—महान् बुद्धिमान्, १७४ महावीर्यः—महान् पराक्रमी, १७५ महाशक्तिः—महान् सामर्थ्यवान्, १७६ महाद्युतिः—महान् कान्तिमान्, १७७ अनिर्देश्यवपुः—अनिर्देश्य विग्रहवाले, १७८ श्रीमान्—ऐश्वर्यवान्, १७९ अमेयात्मा—जिसका अनुमान न किया जा सके ऐसे आत्मावाले, १८० महाद्रिधृक्—अमृतमन्थन और गोरक्षणके समय मन्दराचल और गोवर्धन नामक महान् पर्वतोंको धारण करनेवाले ॥ ३२ ॥

महेष्वासो महीभर्ता श्रीनिवासः सतां गतिः ।
अनिरुद्धः सुरानन्दो गोविन्दो गोविदां पतिः।३३।

१८१ महेष्वासः—महान् धनुषवाले, १८२ महीभर्ता—पृथ्वीको धारण करनेवाले, १८३ श्रीनिवासः—

अपने वक्षःस्थलमें श्रीको निवास देनेवाले, १८४ **सतां गतिः**—सत्पुरुषोंके परम आश्रय, १८५ **अनिरुद्धः**—सच्ची भक्तिके बिना किसीके भी द्वारा न रुकनेवाले, १८६ **सुरानन्दः**—देवताओंको आनन्दित करनेवाले, १८७ **गोविन्दः**—वेदवाणीके द्वारा अपनेको प्राप्त करा देनेवाले, १८८ **गोविदां पतिः**—वेदवाणीको जाननेवालोंके स्वामी ॥ ३३ ॥

मरीचिर्दमनो हंसः सुपर्णो भुजगोत्तमः ।
हिरण्यनाभः सुतपाः पद्मनाभः प्रजापतिः ॥३४॥

१८९ **मरीचिः**—तेजस्वियोंके भी परम तेजरूप, १९० **दमनः**—प्रमाद करनेवाली प्रजाको यम आदिके रूपसे दमन करनेवाले, १९१ **हंसः**—पितामह ब्रह्माको वेदका ज्ञान करानेके लिये हंसरूप धारण करनेवाले, १९२ **सुपर्णः**—सुन्दर पङ्खवाले गरुडस्वरूप, १९३ **भुजगोत्तमः**—सर्पोंमें श्रेष्ठ शेषनागरूप, १९४ **हिरण्यनाभः**—हितकारी और रमणीय नाभिवाले, १९५ **सुतपाः**—बदरिकाश्रममें नर-नारायणरूपसे सुन्दर तप करनेवाले, १९६ **पद्मनाभः**—

कमलके समान सुन्दर नाभिवाले, १९७ प्रजापतिः—सम्पूर्ण प्रजाओंके पालनकर्ता ॥ ३४ ॥

अमृत्युः सर्वदृक् सिंहः सन्धाता सन्धिमान्स्थिरः।
अजो दुर्मर्षणः शास्ता विश्रुतात्मा सुरारिहा ॥३५॥

१९८ अमृत्युः—मृत्युसे रहित, १९९ सर्वदृक्—सब कुछ देखनेवाले, २०० सिंहः—दुष्टोंका विनाश करनेवाले, २०१ सन्धाता—पुरुषोंको उनके कर्मोंके फलोंसे संयुक्त करनेवाले, २०२ सन्धिमान्—सम्पूर्ण यज्ञ और तपोंको भोगनेवाले, २०३ स्थिरः—सदा एकरूप, २०४ अजः—भक्तोंके हृदयोंमें जानेवाले तथा दुर्गुणोंको दूर हटा देनेवाले, २०५ दुर्मर्षणः—किसीसे भी सहन नहीं किये जा सकनेवाले, २०६ शास्ता—सबपर शासन करनेवाले, २०७ विश्रुतात्मा—वेद-शास्त्रोंमें विशेषरूपसे प्रसिद्ध स्वरूपवाले, २०८ सुरारिहा—देवताओंके शत्रुओंको मारनेवाले ॥ ३५॥

गुरुर्गुरुतमो धाम सत्यः सत्यपराक्रमः ।
निमिषोऽनिमिषः स्रग्वी वाचस्पतिरुदारधीः।३६।

२०९ गुरुः—सब विद्याओंका उपदेश करनेवाले, २१० गुरुतमः—ब्रह्मा आदिको भी ब्रह्मविद्या प्रदान करनेवाले, २११ धाम—सम्पूर्ण प्राणियोंकी कामनाओंके आश्रय, २१२ सत्यः—सत्यस्वरूप, २१३ सत्यपराक्रमः—अमोघ पराक्रमवाले, २१४ निमिषः—योगनिद्रासे मुँदे हुए नेत्रोंवाले, २१५ अनिमिषः—मत्स्यरूपसे अवतार लेनेवाले, २१६ स्रग्वी—वैजयन्ती माला धारण करनेवाले, २१७ वाचस्पतिरुदारधीः—सारे पदार्थोंको प्रत्यक्ष करनेवाली बुद्धिसे युक्त समस्त विद्याओंके पति ॥३६॥

अग्रणीर्ग्रामणीः श्रीमान्न्यायो नेता समीरणः ।
सहस्रमूर्धा विश्वात्मा सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥३७॥

२१८ अग्रणीः—मुमुक्षुओंको उत्तम पदपर ले जानेवाले, २१९ ग्रामणीः—भूतसमुदायके नेता, २२० श्रीमान्—सबसे बढ़ी-चढ़ी कान्तिवाले, २२१ न्यायः—प्रमाणोंके आश्रयभूत तर्ककी मूर्ति, २२२ नेता—जगत्‌रूप यन्त्रको चलानेवाले, २२३ समीरणः—श्वासरूपसे प्राणियोंसे चेष्टा करानेवाले, २२४ सहस्रमूर्धा—हजार सिरवाले,

२२५ **विश्वात्मा**—विश्वके आत्मा, २२६—**सहस्राक्षः**—हजार आँखोंवाले, २२७ **सहस्रपात्**—हजार पैरोंवाले ॥ ३७ ॥

आवर्तनो निवृत्तात्मा संवृतः सम्प्रमर्दनः ।
अहःसंवर्तको वह्निरनिलो धरणीधरः ॥३८॥

२२८—**आवर्तनः**—संसारचक्रको चलानेके स्वभाव-वाले, २२९ **निवृत्तात्मा**—संसारबन्धनसे मुक्त आत्मस्वरूप, २३० **संवृतः**—अपनी योगमायासे ढके हुए, २३१ **सम्प्रमर्दनः**—अपने रुद्र आदि स्वरूपसे सबका मर्दन करनेवाले, २३२ **अहःसंवर्तकः**—सूर्यरूपसे सम्यक्तया दिनके प्रवर्तक, २३३ **वह्निः**—हविको वहन करनेवाले अग्निदेव, २३४ **अनिलः**—प्राणरूपसे वायुस्वरूप, २३५ **धरणीधरः**—वराह और शेषरूपसे पृथ्वीको धारण करनेवाले ॥ ३८ ॥

सुप्रसादः प्रसन्नात्मा विश्वधृग्विश्वभुग्विभुः ।
सत्कर्ता सत्कृतः साधुर्जह्नुर्नारायणो नरः ॥३९॥

२३६ सुप्रसादः—शिशुपालादि अपराधियोंपर भी कृपा करनेवाले, २३७ प्रसन्नात्मा—प्रसन्न स्वभाववाले अर्थात् करुणा करनेवाले, २३८ विश्वधृक्—जगत्को धारण करनेवाले, २३९ विश्वभुक्—विश्वको भोगनेवाले अर्थात् विश्वका पालन करनेवाले, २४० विभुः—विविध प्रकारसे प्रकट होनेवाले, २४१ सत्कर्ता—भक्तोंका सत्कार करनेवाले, २४२ सत्कृतः—पूजितोंसे भी पूजित, २४३ साधुः—भक्तोंके कार्य साधनेवाले, २४४ जह्नुः—संहारके समय जीवोंका लय करनेवाले, २४५ नारायणः—जलमें शयन करनेवाले, २४६ नरः—भक्तोंको परम धाममें ले जानेवाले ॥ ३९ ॥

असंख्येयोऽप्रमेयात्मा विशिष्टः शिष्टकृच्छुचिः ।
सिद्धार्थः सिद्धसंकल्पः सिद्धिदः सिद्धिसाधनः॥४०

२४७ असंख्येयः—नाम और गुणोंकी संख्यासे शून्य, २४८ अप्रमेयात्मा—किसीसे भी मापे न जा सकनेवाले, २४९ विशिष्टः—सबसे उत्कृष्ट, २५० शिष्टकृत्—शासन करनेवाले, २५१ शुचिः—परम शुद्ध, २५२ सिद्धार्थः—

इच्छित अर्थको सर्वथा सिद्ध कर चुकनेवाले, २५३ सिद्धसङ्कल्पः–सत्य सङ्कल्पवाले, २५४ सिद्धिदः–कर्म करनेवालोंको उनके अधिकारके अनुसार फल देनेवाले, २५५ सिद्धिसाधनः–सिद्धिरूप क्रियाके साधक ॥ ४० ॥

वृषाही वृषभो विष्णुर्वृषपर्वा वृषोदरः ।
वर्धनो वर्धमानश्च विविक्तः श्रुतिसागरः ॥४१॥

२५६ वृषाही–द्वादशाहादि यज्ञोंको अपनेमें स्थित रखनेवाले,२५७ वृषभः–भक्तोंके लिये इच्छित वस्तुओंकी वर्षा करनेवाले, २५८ विष्णुः–शुद्ध सत्त्वमूर्ति, २५९ वृषपर्वा–परम धाममें आरूढ़ होनेकी इच्छावालोंके लिये धर्मरूप सीढ़ियोंवाले,२६० वृषोदरः–अपने उदरमें धर्मको धारण करनेवाले, २६१ वर्धनः–भक्तोंको बढ़ानेवाले, २६२ वर्धमानः–संसाररूपसे बढ़नेवाले, २६३ विविक्तः–संसारसे पृथक् रहनेवाले, २६४ श्रुतिसागरः–वेदरूप जलके समुद्र ॥ ४१ ॥

सुभुजो दुर्धरो वाग्मी महेन्द्रो वसुदो वसुः ।
नैकरूपो बृहद्रूपः शिपिविष्टः प्रकाशनः ॥४२॥

२६५ सुभुजः—जगत्की रक्षा करनेवाली अति सुन्दर भुजाओंवाले, २६६ दुर्धरः—दूसरोंसे धारण न किये जा सकनेवाले, पृथ्वी आदि लोकधारक पदार्थोंको भी धारण करनेवाले और स्वयं किसीसे धारण न किये जा सकनेवाले, २६७ वाग्मी—वेदमयी वाणीको उत्पन्न करनेवाले, २६८ महेन्द्रः—ईश्वरोंके भी ईश्वर, २६९ वसुदः—धन देनेवाले, २७० वसुः—धनरूप, २७१ नैकरूपः—अनेक रूपधारी, २७२ बृहद्रूपः—विश्वरूपधारी, २७३ शिपिविष्टः—सूर्यकिरणोंमें स्थित रहनेवाले, २७४ प्रकाशनः—सबको प्रकाशित करनेवाले ॥ ४२ ॥

ओजस्तेजोद्युतिधरः प्रकाशात्मा प्रतापनः ।
ऋद्धः स्पष्टाक्षरो मन्त्रश्चन्द्रांशुर्भास्करद्युतिः ॥४३॥

२७५ ओजस्तेजोद्युतिधरः—प्राण और बल, शूरवीरता आदि गुण तथा ज्ञानकी दीप्तिको धारण करनेवाले, २७६ प्रकाशात्मा—प्रकाशरूप विग्रहवाले, २७७ प्रतापनः—सूर्य आदि अपनी विभूतियोंसे विश्वको तप्त

करनेवाले, २७८ ऋद्धः—धर्म, ज्ञान और वैराग्यादिसे सम्पन्न, २७९ स्पष्टाक्षरः—ओंकाररूप स्पष्ट अक्षरवाले, २८० मन्त्रः—ऋक्, साम और यजुरूप मन्त्रोंसे जानने योग्य, २८१ चन्द्रांशुः—संसारतापसे सन्तप्तचित्त पुरुषोंको चन्द्रमाकी किरणोंके समान आह्लादित करनेवाले, २८२ भास्करद्युतिः—सूर्यके समान प्रकाशस्वरूप ॥ ४३ ॥

अमृतांशूद्भवो भानुः शशबिन्दुः सुरेश्वरः ।
औषधं जगतः सेतुः सत्यधर्मपराक्रमः ॥४४॥

२८३ अमृतांशूद्भवः—समुद्रमन्थन करते समय चन्द्रमाको उत्पन्न करनेवाले समुद्ररूप, २८४ भानुः—भासनेवाले, २८५ शशबिन्दुः—खरगोशके समान चिह्नवाले चन्द्रमाकी तरह सम्पूर्ण प्रजाका पोषण करनेवाले, २८६ सुरेश्वरः—देवताओंके ईश्वर, २८७ औषधम्—संसाररोगको मिटानेके लिये औषधरूप, २८८ जगतः सेतुः—संसारसागरको पार करानेके लिये सेतुरूप, २८९ सत्यधर्मपराक्रमः—सत्यस्वरूप धर्म और पराक्रमवाले ॥ ४४ ॥

भूतभव्यभवन्नाथः पवनः पावनोऽनलः ।
कामहा कामकृत्कान्तः कामःकामप्रदःप्रभुः।४५।

२९० भूतभव्यभवन्नाथः–भूत, भविष्य और वर्तमान सभी प्राणियोंके स्वामी, २९१ पवनः–वायुरूप, २९२ पावनः–दृष्टिमात्रसे जगत्को पवित्र करनेवाले, २९३ अनलः–अग्निस्वरूप, २९४ कामहा–अपने भक्तजनोंके सकामभावको नष्ट करनेवाले, २९५ कामकृत्–भक्तोंकी कामनाओंको पूर्ण करनेवाले, २९६ कान्तः–कमनीयरूप, २९७ कामः–(क) ब्रह्मा, (अ) विष्णु, (म) महादेव–इस प्रकार त्रिदेवरूप, २९८ कामप्रदः–भक्तोंको उनकी कामना की हुई वस्तुएँ प्रदान करनेवाले, २९९ प्रभुः–सर्वोत्कृष्ट सर्वसामर्थ्यवान् स्वामी ॥ ४५ ॥

युगादिकृद्युगावर्तो नैकमायो महाशनः ।
अदृश्यो व्यक्तरूपश्च सहस्रजिदनन्तजित् ॥४६॥

३०० युगादिकृत्–युगादिका आरम्भ करनेवाले, ३०१ युगावर्तः–चारों युगोंको चक्रके समान घुमानेवाले,

३०२ नैकमायः—अनेकों मायाओंको धारण करनेवाले, ३०३ महाशनः—कल्पके अन्तमें सबको ग्रसन करनेवाले, ३०४ अदृश्यः—समस्त ज्ञानेन्द्रियोंके अविषय, ३०५ व्यक्तरूपः—स्थूलरूपसे व्यक्त स्वरूपवाले, ३०६ सहस्रजित्—युद्धमें हजारों देवशत्रुओंको जीतनेवाले, ३०७ अनन्तजित्—युद्ध और क्रीडा आदिमें सर्वत्र समस्त भूतोंको जीतनेवाले ॥ ४६ ॥

इष्टोऽविशिष्टः शिष्टेष्टः शिखण्डी नहुषो वृषः।
क्रोधहा क्रोधकृत्कर्ता विश्वबाहुर्महीधरः ॥४७॥

३०८ इष्टः—परमानन्दरूप होनेसे सर्वप्रिय, ३०९ अविशिष्टः—सम्पूर्ण विशेषणोंसे रहित सर्वश्रेष्ठ, ३१० शिष्टेष्टः—शिष्ट पुरुषोंके इष्टदेव, ३११ शिखण्डी—मयूरपिच्छको अपना शिरोभूषण बना लेनेवाले, ३१२ नहुषः—भूतोंको मायासे बाँधनेवाले, ३१३ वृषः—कामनाओंको पूर्ण करनेवाले, ३१४ क्रोधहा—क्रोधका नाश करनेवाले, ३१५ क्रोधकृत्कर्ता—दुष्टोंपर क्रोध करनेवाले

और जगत्‌को उनके कर्मोंके अनुसार रचनेवाले, ३१६ विश्वबाहुः–सब ओर बाहुओंवाले, ३१७ महीधरः–पृथ्वीको धारण करनेवाले ॥ ४७ ॥

अच्युतः प्रथितः प्राणः प्राणदो वासवानुजः।
अपां निधिरधिष्ठानमप्रमत्तः प्रतिष्ठितः ॥४८॥

३१८ अच्युतः–छः भावविकारोंसे रहित, ३१९ प्रथितः–जगत्‌की उत्पत्ति आदि कर्मोंके कारण, ३२० प्राणः–हिरण्यगर्भरूपसे प्रजाको जीवित रखनेवाले, ३२१ प्राणदः–सबका भरण-पोषण करनेवाले, ३२२ वासवानुजः–वामनावतारमें कश्यपजीद्वारा अदितिसे इन्द्रके अनुजरूपमें उत्पन्न होनेवाले, ३२३ अपां निधिः–जलको एकत्रित रखनेवाले समुद्ररूप, ३२४ अधिष्ठानम्–उपादानकारणरूपसे सब भूतोंके आश्रय, ३२५ अप्रमत्तः–अधिकारियोंको उनके कर्मानुसार फल देनेमें कभी प्रमाद न करनेवाले, ३२६ प्रतिष्ठितः–अपनी महिमामें स्थित ॥ ४८ ॥

स्कन्दः स्कन्दधरो धुर्यो वरदो वायुवाहनः ।
वासुदेवो बृहद्भानुरादिदेवः पुरन्दरः ॥४९॥

३२७ **स्कन्दः**—स्वामिकार्तिकेयरूप, ३२८ **स्कन्दधरः**—धर्मपथको धारण करनेवाले, ३२९ **धुर्यः**—समस्त भूतोंके जन्मादिरूप धुरको धारण करनेवाले, ३३० **वरदः**—इच्छित वर देनेवाले, ३३१ **वायुवाहनः**—सारे वायुभेदोंको चलानेवाले, ३३२ **वासुदेवः**—समस्त प्राणियोंको अपनेमें बसानेवाले तथा सब भूतोंमें सर्वात्मारूपसे बसनेवाले, दिव्यस्वरूप, ३३३ **बृहद्भानुः**—महान् किरणोंसे युक्त एवं सम्पूर्ण जगत्को प्रकाशित करनेवाले, ३३४ **आदिदेवः**—सबके आदि कारण देव, ३३५ **पुरन्दरः**—असुरोंके नगरोंका ध्वंस करनेवाले ॥ ४९ ॥

अशोकस्तारणस्तारः शूरः शौरिर्जनेश्वरः ।
अनुकूलः शतावर्तः पद्मी पद्मनिभेक्षणः ॥५०॥

३३६ **अशोकः**—सब प्रकारके शोकसे रहित, ३३७ **तारणः**—संसारसागरसे तारनेवाले, ३३८ **तारः**—जन्म-जरा-

मृत्युरूप भयसे तारनेवाले, ३३९ शूरः—पराक्रमी, ३४० शौरिः—शूरवीर श्रीवसुदेवजीके पुत्र, ३४१ जनेश्वरः—समस्त जीवोंके स्वामी, ३४२ अनुकूलः—आत्मारूप होनेसे सबके अनुकूल, ३४३ शतावर्तः—धर्मरक्षाके लिये सैकड़ों अवतार लेनेवाले, ३४४ पद्मी—अपने हाथमें कमल धारण करनेवाले, ३४५ पद्मनिभेक्षणः—कमलके समान कोमल दृष्टिवाले ॥ ५० ॥

पद्मनाभोऽरविन्दाक्षः पद्मगर्भः शरीरभृत् ।
महर्द्धिर्ऋद्धो वृद्धात्मा महाक्षो गरुडध्वजः ॥५१॥

३४६ पद्मनाभः—हृदय-कमलके मध्य निवास करनेवाले, ३४७ अरविन्दाक्षः—कमलके समान आँखोंवाले, ३४८ पद्मगर्भः—हृदयकमलमें ध्यान करनेयोग्य, ३४९ शरीरभृत्—अन्नरूपसे सबके शरीरोंका भरण करनेवाले, ३५० महर्द्धिः—महान् विभूतिवाले, ३५१ ऋद्धः—सबमें बढ़े-चढ़े, ३५२ वृद्धात्मा—पुरातन आत्मवान्, ३५३ महाक्षः—विशाल नेत्रोंवाले, ३५४ गरुडध्वजः—गरुडके चिह्नसे युक्त ध्वजावाले ॥ ५१ ॥

अतुलः शरभो भीमः समयज्ञो हविर्हरिः ।
सर्वलक्षणलक्षण्यो लक्ष्मीवान्समितिञ्जयः ॥५२॥

३५५ **अतुलः**—तुलनारहित, ३५६ **शरभः**—शरीरोंको प्रत्यगात्मरूपसे प्रकाशित करनेवाले, ३५७ **भीमः**—जिससे पापियोंको भय हो ऐसे भयानक, ३५८ **समयज्ञः**—समभाव-रूप यज्ञसे प्राप्त होनेवाले, ३५९ **हविर्हरिः**—यज्ञोंमें हविर्भाग-को और अपना स्मरण करनेवालोंके पापोंको हरण करने-वाले, ३६० **सर्वलक्षणलक्षण्यः**—समस्त लक्षणोंसे लक्षित होनेवाले, ३६१ **लक्ष्मीवान्**—अपने वक्षःस्थलमें लक्ष्मीजीको सदा बसानेवाले, ३६२ **समितिञ्जयः**—संग्राम-विजयी ॥ ५२ ॥

विक्षरो रोहितो मार्गो हेतुर्दामोदरः सहः ।
महीधरो महाभागो वेगवानमिताशनः ॥५३॥

३६३ **विक्षरः**—नाशरहित, ३६४ **रोहितः**—मत्स्य-विशेषका स्वरूप धारण करके अवतार लेनेवाले, ३६५ **मार्गः**—परमानन्द-प्राप्तिके साधनस्वरूप, ३६६ **हेतुः**—

संसारके निमित्त और उपादान कारण, ३६७ दामोदरः—यशोदाजीद्वारा रस्सं से बँधे हुए उदरवाले, ३६८ सहः—भक्तजनोंके अपराधोंको सहन करनेवाले, ३६९ महीधरः—पर्वतरूपसे पृथ्वीको धारण करनेवाले, ३७० महाभागः—महान् भाग्यशाली, ३७१ वेगवान्—तीव्रगतिवाले, ३७२ अमिताशनः—सारे विश्वको भक्षण करनेवाले ॥ ५३ ॥

उद्भवः क्षोभणो देवः श्रीगर्भः परमेश्वरः ।
करणं कारणं कर्ता विकर्ता गहनो गुहः ॥५४॥

३७३ उद्भवः—जगत्की उत्पत्तिके उपादानकारण, ३७४ क्षोभणः—जगत्की उत्पत्तिके समय प्रकृति और पुरुषमें प्रविष्ट होकर उन्हें क्षुब्ध करनेवाले, ३७५ देवः—प्रकाशस्वरूप, ३७६ श्रीगर्भः—सम्पूर्ण ऐश्वर्यको अपने उदरगर्भमें रखनेवाले, ३७७ परमेश्वरः—सर्वश्रेष्ठ शासन करनेवाले, ३७८ करणम्—संसारकी उत्पत्तिके सबसे बड़े साधन, ३७९ कारणम्—जगत्के उपादान और निमित्त-कारण, ३८० कर्ता—सब प्रकारसे स्वतन्त्र, ३८१ विकर्ता—विचित्र भुवनोंकी रचना करनेवाले, ३८२

गह्वनः—अपने विलक्षण स्वरूप, सामर्थ्य और लीलादिके कारण पहचाने न जा सकनेवाले, ३८३ गुहः—मायासे अपने स्वरूपको ढक लेनेवाले ॥ ५४ ॥

व्यवसायो व्यवस्थानः संस्थानः स्थानदो ध्रुवः ।
परर्द्धिः परमस्पष्टस्तुष्टः पुष्टः शुभेक्षणः ॥५५॥

३८४ व्यवसायः—ज्ञानमात्रस्वरूप, ३८५ व्यवस्थानः—लोकपालादिकोंको, समस्त जीवोंको, चारों वर्णाश्रमोंको एवं उनके धर्मोंको व्यवस्थापूर्वक रचनेवाले, ३८६ संस्थानः—प्रलयके सम्यक् स्थान, ३८७ स्थानदः—ध्रुवादि भक्तोंको स्थान देनेवाले, ३८८ ध्रुवः—अविनाशी, ३८९ परर्द्धिः—श्रेष्ठ विभूतिवाले, ३९० परमस्पष्टः—ज्ञानस्वरूप होनेसे परम स्पष्टरूप, अवतार-विग्रहमें सबके सामने प्रत्यक्ष प्रकट होनेवाले, ३९१ तुष्टः—एकमात्र परमानन्दस्वरूप, ३९२ पुष्टः—सर्वत्र परिपूर्ण, ३९३ शुभेक्षणः—दर्शनमात्रसे कल्याण करनेवाले ॥ ५५ ॥

रामो विरामो विरजो मार्गो नेयो नयोऽनयः ।
वीरः शक्तिमतां श्रेष्ठो धर्मो धर्मविदुत्तमः ॥५६॥

३९४ रामः—योगीजनोंके रमण करनेके लिये नित्यानन्दस्वरूप, ३९५ **विरामः**—प्रलयके समय प्राणियोंको अपनेमें विराम देनेवाले, ३९६ **विरजः**—रजोगुण तथा तमोगुणसे सर्वथा शून्य, ३९७ **मार्गः**—मुमुक्षुजनोंके अमर होनेके साधनस्वरूप, ३९८ **नेयः**—उत्तम ज्ञानसे ग्रहण करनेयोग्य, ३९९ **नयः**—सबको नियममें रखनेवाले, ४०० **अनयः**—स्वतन्त्र, ४०१ **वीरः**—पराक्रमशाली, ४०२ **शक्तिमतां श्रेष्ठः**—शक्तिमानोंमें भी अतिशय शक्तिमान्, ४०३ **धर्मः**—श्रुति-स्मृतिरूप धर्म, ४०४ **धर्मविदुत्तमः**—समस्त धर्मवेत्ताओंमें उत्तम ॥५६॥

वैकुण्ठः पुरुषः प्राणः प्राणदः प्रणवः पृथुः ।
हिरण्यगर्भः शत्रुघ्नो व्याप्तो वायुरधोक्षजः ॥५७॥

४०५ **वैकुण्ठः**—परमधामस्वरूप, ४०६ **पुरुषः**—विश्वरूप शरीरमें शयन करनेवाले, ४०७ **प्राणः**—प्राणवायुरूपसे चेष्टा करनेवाले, ४०८ **प्राणदः**—सर्गके आदिमें प्राण प्रदान करनेवाले, ४०९ **प्रणवः**—जिसको वेद

भी प्रणाम करते हैं, वे भगवान्, ४१० पृथुः-विराट्‌रूपसे विस्तृत होनेवाले, ४११ हिरण्यगर्भः-ब्रह्मारूपसे प्रकट होनेवाले, ४१२ शत्रुघ्नः-शत्रुओंको मारनेवाले, ४१३ व्याप्तः-कारणरूपसे सब कार्योंको व्याप्त करनेवाले, ४१४ वायुः-पवनरूप, ४१५ अधोक्षजः-अपने स्वरूपसे क्षीण न होनेवाले ॥ ५७ ॥

ऋतुः सुदर्शनः कालः परमेष्ठी परिग्रहः ।
उग्रः संवत्सरो दक्षो विश्रामो विश्वदक्षिणः ॥५८॥

४१६ ऋतुः-कालरूपसे लक्षित होनेवाले, ४१७ सुदर्शनः-भक्तोंको सुगमतासे ही दर्शन दे देनेवाले, ४१८ कालः-सबकी गणना करनेवाले, ४१९ परमेष्ठी-अपनी प्रकृष्ट महिमामें स्थित रहनेके स्वभाववाले, ४२० परिग्रहः-शरणार्थियोंके द्वारा सब ओरसे ग्रहण किये जानेवाले, ४२१ उग्रः-सूर्यादिके भी भयके कारण, ४२२ संवत्सरः-सम्पूर्ण भूतोंके वासस्थान, ४२३ दक्षः-सब कार्योंको बड़ी कुशलतासे करनेवाले, ४२४ विश्रामः-

विश्रामकी इच्छावाले मुमुक्षुओंको मोक्ष देनेवाले, ४२५ विश्वदक्षिणः—बलिके यज्ञमें समस्त विश्वको दक्षिणा-रूपमें प्राप्त करनेवाले ॥ ५८ ॥

विस्तारः स्थावरस्थाणुः प्रमाणं बीजमव्ययम् ।
अर्थोऽनर्थो महाकोशो महाभोगो महाधनः ॥५९॥

४२६ विस्तारः—समस्त लोकोंके विस्तारके कारण, ४२७ स्थावरस्थाणुः—स्वयं स्थितिशील रहकर पृथ्वी आदि स्थितिशील पदार्थोंको अपनेमें स्थित रखनेवाले, ४२८ प्रमाणम्—ज्ञानस्वरूप होनेके कारण स्वयं प्रमाण-रूप, ४२९ बीजमव्ययम्—संसारके अविनाशी कारण, ४३० अर्थः—सुखस्वरूप होनेके कारण सबके द्वारा प्रार्थनीय, ४३१ अनर्थः—पूर्णकाम होनेके कारण प्रयोजनरहित, ४३२ महाकोशः—बड़े खजानेवाले, ४३३ महाभोगः—सुखरूप महान् भोगवाले, ४३४ महाधनः—यथार्थ और अतिशय धनस्वरूप ॥ ५९ ॥

अनिर्विण्णः स्थविष्ठोऽभूर्धर्मयूपो महामखः ।
नक्षत्रनेमिर्नक्षत्री क्षमः क्षामः समीहनः ॥६०॥

४३५ अनिर्विण्णः–उकताहटरूप विकारसे रहित, ४३६ स्थविष्ठः–विराट्रूपसे स्थित, ४३७ अभूः–अजन्मा, ४३८ धर्मयूपः–धर्मके स्तम्भरूप, ४३९ महामखः–अर्पित किये हुए यज्ञोंको निर्वाणरूप महान् फलदायक बना देनेवाले, ४४० नक्षत्रनेमिः–समस्त नक्षत्रोंके केन्द्र-स्वरूप, ४४१ नक्षत्री–चन्द्ररूप, ४४२ क्षमः–समस्त कार्योंमें समर्थ, ४४३ क्षामः–समस्त विकारोंके क्षीण हो जानेपर परमात्मभावसे स्थित, ४४४ समीहनः–सृष्टि आदिके लिये भलीभाँति चेष्टा करनेवाले ॥ ६० ॥

यज्ञ इज्यो महेज्यश्च क्रतुः सत्रं सतां गतिः ।
सर्वदर्शी विमुक्तात्मा सर्वज्ञो ज्ञानमुत्तमम् ॥६१॥

४४५ यज्ञः–भगवान् विष्णु, ४४६ इज्यः–पूजनीय, ४४७ महेज्यः–सबसे अधिक उपासनीय, ४४८ क्रतुः–यूपसंयुक्त यज्ञस्वरूप, ४४९ सत्रम्–सत्पुरुषोंकी रक्षा करनेवाले, ४५० सतां गतिः–सत्पुरुषोंके परम प्रापणीय स्थान, ४५१ सर्वदर्शी–समस्त प्राणियोंको और उनके कार्योंको देखनेवाले, ४५२ विमुक्तात्मा–सांसारिक

बन्धनसे रहित आत्मस्वरूप, ४५३ **सर्वज्ञः**—सबको जाननेवाले, ४५४ **ज्ञानमुत्तमम्**—सर्वोत्कृष्ट ज्ञानस्वरूप ॥६१॥

सुव्रतः सुमुखः सूक्ष्मः सुघोषः सुखदः सुहृत् ।
मनोहरो जितक्रोधो वीरबाहुर्विदारणः ॥६२॥

४५५ **सुव्रतः**—प्रणतपालनादि श्रेष्ठ व्रतोंवाले, ४५६ **सुमुखः**—सुन्दर और प्रसन्न मुखवाले, ४५७ **सूक्ष्मः**—अणुसे भी अणु, ४५८ **सुघोषः**—सुन्दर और गम्भीर वाणी बोलनेवाले, ४५९ **सुखदः**—अपने भक्तोंको सब प्रकारसे सुख देनेवाले, ४६० **सुहृत्**—प्राणिमात्रपर अहैतुकी दया करनेवाले परम मित्र, ४६१ **मनोहरः**—अपने रूप-लावण्य और मधुर भाषणादिसे सबके मनको हरनेवाले, ४६२ **जितक्रोधः**—क्रोधपर विजय करनेवाले अर्थात् अपने साथ अत्यन्त अनुचित व्यवहार करनेवालेपर भी क्रोध न करनेवाले, ४६३ **वीरबाहुः**—अत्यन्त पराक्रमशील भुजाओंसे युक्त, ४६४ **विदारणः**—अधर्मियोंको नष्ट करनेवाले ॥ ६२ ॥

स्वापनः स्ववशो व्यापी नैकात्मा नैककर्मकृत् ।
वत्सरो वत्सलो वत्सी रत्नगर्भो धनेश्वरः ॥६३॥

४६५ स्वापनः—प्रलयकालमें समस्त प्राणियोंको अज्ञाननिद्रामें शयन करानेवाले, ४६६ स्ववशः—स्वतन्त्र, ४६७ व्यापी—आकाशकी भाँति सर्वव्यापी, ४६८ नैकात्मा—प्रत्येक युगमें लोकोद्धारके लिये अनेक रूप धारण करनेवाले, ४६९ नैककर्मकृत्—जगत्‌की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलयरूप तथा भिन्न-भिन्न अवतारोंमें मनोहर लीलारूप अनेक कर्म करनेवाले, ४७० वत्सरः—सबके निवास-स्थान, ४७१ वत्सलः—भक्तोंके परम स्नेही, ४७२ वत्सी—वृन्दावनमें बछड़ोंका पालन करनेवाले, ४७३ रत्नगर्भः—रत्नोंको अपने गर्भमें धारण करनेवाले समुद्ररूप, ४७४ धनेश्वरः—सब प्रकारके धनोंके स्वामी ॥ ६३ ॥

धर्मगुब्धर्मकृद्धर्मी सदसत्क्षरमक्षरम् ।
अविज्ञाता सहस्रांशुर्विधाता कृतलक्षणः ॥६४॥

४७५ धर्मगुप्—धर्मकी रक्षा करनेवाले, ४७६

धर्मकृत्–धर्मकी स्थापनाके लिये स्वयं धर्मका आचरण करनेवाले, ४७७ धर्मी–सम्पूर्ण धर्मोंके आधार, ४७८ सत्–सत्यस्वरूप, ४७९ असत्–स्थूल जगत्स्वरूप, ४८० क्षरम्–सर्वभूतमय, ४८१ अक्षरम्–अविनाशी, ४८२ अविज्ञाता–क्षेत्रज्ञ जीवात्माको विज्ञाता कहते हैं, उनसे विलक्षण भगवान् विष्णु, ४८३ सहस्रांशुः–हजारों किरणोंवाले सूर्यस्वरूप, ४८४ विधाता–सबको अच्छी प्रकार धारण करनेवाले, ४८५ कृतलक्षणः–श्रीवत्स आदि चिह्नोंको धारण करनेवाले ॥ ६४ ॥

गभस्तिनेमिः सत्त्वस्थः सिंहो भूतमहेश्वरः ।
आदिदेवो महादेवो देवेशो देवभृद्गुरुः ॥६५॥

४८६ गभस्तिनेमिः–किरणोंके बीचमें सूर्यरूपसे स्थित, ४८७ सत्त्वस्थः–अन्तर्यामीरूपसे समस्त प्राणियोंके अन्तःकरणमें स्थित रहनेवाले, ४८८ सिंहः–भक्त प्रह्लादके लिये नृसिंहरूप धारण करनेवाले, ४८९ भूतमहेश्वरः–सम्पूर्ण प्राणियोंके महान् ईश्वर, ४९० आदिदेवः–सबके आदि कारण और दिव्य स्वरूप, ४९१ महादेवः–ज्ञानयोग

और ऐश्वर्य आदि महिमाओंसे युक्त, ४९२ देवेशः—समस्त देवोंके स्वामी, ४९३ देवभृद्गुरुः—देवोंका विशेषरूपसे भरण-पोषण करनेवाले उनके परम गुरु ॥ ६५ ॥

उत्तरो गोपतिर्गोप्ता ज्ञानगम्यः पुरातनः ।
शरीरभूतभृद्भोक्ता कपीन्द्रो भूरिदक्षिणः ॥६६॥

४९४ उत्तरः—संसार-समुद्रसे उद्धार करनेवाले और सर्वश्रेष्ठ, ४९५ गोपतिः—गोपालरूपसे गायोंकी रक्षा करनेवाले, ४९६ गोप्ता—समस्त प्राणियोंका पालन और रक्षा करनेवाले, ४९७ ज्ञानगम्यः—ज्ञानके द्वारा जाननेमें आनेवाले, ४९८ पुरातनः—सदा एकरस रहनेवाले सबके आदि पुराणपुरुष, ४९९ शरीरभूतभृत्—शरीरके उत्पादक पञ्चभूतोंका प्राणरूपसे पालन करनेवाले, ५०० भोक्ता—निरतिशय आनन्दपुञ्जको भोगनेवाले, ५०१ कपीन्द्रः—बंदरोंके स्वामी श्रीराम, ५०२ भूरिदक्षिणः—श्रीरामादि अवतारोंमें यज्ञ करते समय बहुत-सी दक्षिणा प्रदान करनेवाले ॥ ६६ ॥

सोमपोऽमृतपः सोमः पुरुजित्पुरुसत्तमः ।
विनयो जयः सत्यसन्धो दाशार्हः सात्वतां पतिः ६७

५०३ सोमपः—यज्ञोंमें देवरूपसे और यजमानरूपसे सोमरसका पान करनेवाले, ५०४ अमृतपः—समुद्रमन्थनसे निकाला हुआ अमृत देवोंको पिलाकर स्वयं पीनेवाले, ५०५ सोमः—ओषधियोंका पोषण करनेवाले चन्द्रमारूप, ५०६ पुरुजित्—बहुतोंपर विजय लाभ करनेवाले, ५०७ पुरुसत्तमः—विश्वरूप और अत्यन्त श्रेष्ठ, ५०८ विनयः—दुष्टोंको दण्ड देनेवाले, ५०९ जयः—सबपर विजय प्राप्त करनेवाले, ५१० सत्यसन्धः—सच्ची प्रतिज्ञा करनेवाले, ५११ दाशार्हः—दाशार्हकुलमें प्रकट होनेवाले, ५१२ सात्वतां पतिः—यादवोंके और अपने भक्तोंके स्वामी यानी उनका योगक्षेम चलानेवाले ॥ ६७ ॥

जीवो विनयितासाक्षी मुकुन्दोऽमितविक्रमः ।
अम्भोनिधिरनन्तात्मा महोदधिशयोऽन्तकः ।६८।

५१३ जीवः—क्षेत्रज्ञरूपसे प्राणोंको धारण करनेवाले,

५१४ विनयितासाक्षी—अपने शरणापन्न भक्तोंके विनय-भावको तत्काल प्रत्यक्ष अनुभव करनेवाले, ५१५ मुकुन्दः—मुक्तिदाता, ५१६ अमितविक्रमः—वामनावतारमें पृथ्वी नापते समय अत्यन्त विस्तृत पैर रखनेवाले, ५१७ अम्भोनिधिः—जलके निधान समुद्रस्वरूप, ५१८ अनन्तात्मा—अनन्तमूर्ति, ५१९ महोदधिशयः—प्रलय-कालके महान् समुद्रमें शयन करनेवाले, ५२० अन्तकः—प्राणियोंका संहार करनेवाले मृत्युस्वरूप ॥ ६८ ॥

अजो महार्हः स्वाभाव्यो जितामित्रः प्रमोदनः ।
आनन्दो नन्दनो नन्दः सत्यधर्मा त्रिविक्रमः ६९

५२१ अजः—अकार भगवान् विष्णुका वाचक है, उससे उत्पन्न होनेवाले ब्रह्मा, ५२२ महार्हः—पूजनीय, ५२३ स्वाभाव्यः—नित्य सिद्ध होनेके कारण स्वभावसे ही उत्पन्न न होनेवाले, ५२४ जितामित्रः—रावण-शिशुपालादि शत्रुओंको जीतनेवाले, ५२५ प्रमोदनः—स्मरणमात्रसे नित्य प्रमुदित करनेवाले, ५२६ आनन्दः—आनन्दस्वरूप, ५२७ नन्दनः—सबको प्रसन्न करनेवाले,

५२८ नन्दः–सम्पूर्ण ऐश्वर्योंसे सम्पन्न, ५२९ सत्यधर्मा–धर्मज्ञानादि सब गुणोंसे युक्त, ५३० त्रिविक्रमः–तीन डगमें तीनों लोकोंको नापनेवाले ॥ ६९ ॥

महर्षिः कपिलाचार्यः कृतज्ञो मेदिनीपतिः ।
त्रिपदस्त्रिदशाध्यक्षो महाश्रृङ्गः कृतान्तकृत् ॥७०॥

५३१ महर्षिः कपिलाचार्यः–सांख्यशास्त्रके प्रणेता भगवान् कपिलाचार्य, ५३२ कृतज्ञः–किये हुएको जाननेवाले यानी अपने भक्तोंकी सेवाको बहुत मानकर अपनेको उनका ऋणी समझनेवाले, ५३३ मेदिनीपतिः–पृथ्वीके स्वामी, ५३४ त्रिपदः–त्रिलोकीरूप तीन पैरोंवाले विश्वरूप, ५३५ त्रिदशाध्यक्षः–देवताओंके स्वामी, ५३६ महाश्रृङ्गः–मत्स्यावतारमें महान् सींग धारण करनेवाले, ५३७ कृतान्तकृत्–स्मरण करनेवालोंके समस्त कर्मोंका अन्त करनेवाले ॥ ७० ॥

महावराहो गोविन्दः सुषेणः कनकाङ्गदी ।
गुह्यो गभीरो गहनो गुप्तश्चक्रगदाधरः ॥७१॥

५३८ महावराहः—हिरण्याक्षका वध करनेके लिये महावराहरूप धारण करनेवाले, ५३९ गोविन्दः—नष्ट हुई पृथ्वीको पुनः प्राप्त कर लेनेवाले, ५४० सुषेणः—पार्षदोंके समुदायरूप सुन्दर सेनासे सुसज्जित, ५४१ कनकाङ्गदी—सुवर्णका बाजूबंद धारण करनेवाले, ५४२ गुह्यः—हृदयाकाशमें छिपे रहनेवाले, ५४३ गभीरः—अतिशय गम्भीर स्वभाववाले, ५४४ गहनः—जिनके स्वरूपमें प्रविष्ट होना अत्यन्त कठिन हो—ऐसे, ५४५ गुप्तः—वाणी और मनसे जाननेमें न आनेवाले, ५४६ चक्रगदाधरः—भक्तोंकी रक्षाके लिये चक्र और गदा आदि दिव्य आयुधोंको धारण करनेवाले ॥ ७१ ॥

वेधाः स्वाङ्गोऽजितः कृष्णो दृढः सङ्कर्षणोऽच्युतः ।
वरुणो वारुणो वृक्षः पुष्कराक्षो महामनाः ॥७२॥

५४७ वेधाः—सब कुछ विधान करनेवाले, ५४८ स्वाङ्गः—कार्य करनेमें स्वयं ही सहकारी, ५४९ अजितः—किसीके द्वारा न जीते जानेवाले, ५५० कृष्णः—श्यामसुन्दर श्रीकृष्ण, ५५१ दृढः—अपने स्वरूप और सामर्थ्यसे कभी

भी च्युत न होनेवाले, ५५२ सङ्कर्षणोऽच्युतः—प्रलय-कालमें एक साथ सबका संहार करनेवाले और जिनका कभी किसी भी कारणसे पतन न हो सके—ऐसे अविनाशी, ५५३ **वरुणः**—जलके स्वामी वरुणदेवता, ५५४ **वारुणः**—वरुणके पुत्र वशिष्ठस्वरूप, ५५५ **वृक्षः**—अश्वत्थवृक्षरूप, ५५६ **पुष्कराक्षः**—हृदय-कमलमें चिन्तन करनेसे प्रत्यक्ष होनेवाले, ५५७ **महामनाः**—सङ्कल्पमात्रसे उत्पत्ति, पालन और संहार आदि समस्त लीला करनेकी शक्तिवाले ॥७२॥

भगवान् भगहानन्दी वनमाली हलायुधः ।
आदित्यो ज्योतिरादित्यः सहिष्णुर्गतिसत्तमः ७३

५५८ **भगवान्**—उत्पत्ति और प्रलय, आना और जाना तथा विद्या और अविद्याको जाननेवाले एवं सर्वैश्वर्यादि छहों भगोंसे युक्त, ५५९ **भगहा**—अपने भक्तोंका प्रेम बढ़ानेके लिये उनके ऐश्वर्यका हरण करनेवाले और प्रलय-कालमें सबके ऐश्वर्यको नष्ट करनेवाले, ५६० **आनन्दी**—परमसुखस्वरूप, ५६१ **वनमाली**—वैजयन्ती वनमाला धारण करनेवाले, ५६२ **हलायुधः**—हलरूप

शङ्खको धारण करनेवाले बलभद्रस्वरूप, ५६३ आदित्यः—अदितिपुत्र वामन भगवान्, ५६४ ज्योतिरादित्यः—सूर्यमण्डलमें विराजमान ज्योतिःस्वरूप, ५६५ सहिष्णुः—समस्त द्वन्द्वोंको सहन करनेमें समर्थ, ५६६ गतिसत्तमः—सत्पुरुषोंके परम गन्तव्य और सर्वश्रेष्ठ ॥ ७३ ॥

सुधन्वा खण्डपरशुर्दारुणो द्रविणप्रदः ।
दिविस्पृक्सर्वदृग्व्यासो वाचस्पतिरयोनिजः ।७४।

५६७ सुधन्वा—अतिशय सुन्दर शार्ङ्गधनुष धारण करनेवाले, ५६८ खण्डपरशुः—शत्रुओंका खण्डन करनेवाले फरसेको धारण करनेवाले परशुरामस्वरूप, ५६९ दारुणः—सन्मार्गविरोधियोंके लिये महान् भयंकर, ५७० द्रविणप्रदः—अर्थार्थी भक्तोंको धन-सम्पत्ति प्रदान करनेवाले, ५७१ दिविस्पृक्—स्वर्गलोकतक व्याप्त, ५७२ सर्वदृग्व्यासः—सबके द्रष्टा एवं वेदका विभाग करनेवाले श्रीकृष्णद्वैपायनस्वरूप, ५७३ वाचस्पतिरयोनिजः—विद्याके स्वामी तथा बिना योनिके स्वयं ही प्रकट होनेवाले ॥ ७४ ॥

त्रिसामा सामगः साम निर्वाणं भेषजं भिषक् ।
संन्यासकृच्छमः शान्तो निष्ठा शान्तिः परायणम् ॥

५७४ **त्रिसामा**–देवव्रत आदि तीन साम-श्रुतियों-द्वारा जिनकी स्तुति की जाती है—ऐसे परमेश्वर, ५७५ **सामगः**–सामवेदका गान करनेवाले, ५७६ **साम**–सामवेदस्वरूप, ५७७ **निर्वाणम्**–परम शान्तिके निधान परमानन्दस्वरूप, ५७८ **भेषजम्**–संसाररोगकी ओषधि, ५७९ **भिषक्**–संसाररोगका नाश करनेके लिये गीतारूप उपदेशामृतका पान करानेवाले–परमवैद्य, ५८० **संन्यासकृत्**–मोक्षके लिये संन्यासाश्रम और संन्यास-योगका निर्माण करनेवाले, ५८१ **शमः**–उपशमताका उपदेश देनेवाले, ५८२ **शान्तः**–परमशान्ताकृति, ५८३ **निष्ठा**–सबकी स्थितिके आधार अधिष्ठानस्वरूप, ५८४ **शान्तिः**–परम शान्तिस्वरूप, ५८५ **परायणम्**–मुमुक्षु पुरुषोंके परम प्राप्यस्थान ॥ ७५ ॥

शुभाङ्गः शान्तिदः स्रष्टा कुमुदः कुवलेशयः ।
गोहितो गोपतिर्गोप्ता वृषभाक्षो वृषप्रियः ॥७६॥

५८६ शुभाङ्गः—अति मनोहर परम सुन्दर अङ्गोंवाले, ५८७ शान्तिदः—परम शान्ति देनेवाले, ५८८ स्रष्टा—सर्गके आदिमें सबकी रचना करनेवाले, ५८९ कुमुदः—पृथ्वीपर प्रसन्नतापूर्वक लीला करनेवाले, ५९० कुवलेशयः—जलमें शेषनागकी शय्यापर शयन करनेवाले, ५९१ गोहितः—गोपालरूपसे गायोंका और अवतार धारण करके भार उतारकर पृथ्वीका हित करनेवाले, ५९२ गोपतिः—पृथ्वीके और गायोंके स्वामी, ५९३ गोप्ता—अवतार धारण करके सबके सम्मुख प्रकट होते समय अपनी मायासे अपने स्वरूपको आच्छादित करनेवाले, ५९४ वृषभाक्षः—समस्त कामनाओंकी वर्षा करनेवाली कृपादृष्टिसे युक्त, ५९५ वृषप्रियः—धर्मसे प्यार करनेवाले ॥ ७६ ॥

अनिवर्ती निवृत्तात्मा संक्षेप्ता क्षेमकृच्छिवः ।
श्रीवत्सवक्षाः श्रीवासः श्रीपतिः श्रीमतां वरः ।७७।

५९६ अनिवर्ती—रणभूमिमें और धर्मपालनमें पीछे न हटनेवाले, ५९७ निवृत्तात्मा—स्वभावसे ही विषयवासनारहित नित्य शुद्ध मनवाले, ५९८ संक्षेप्ता—विस्तृत

जगत्को क्षणभरमें संक्षिप्त यानी सूक्ष्मरूपमें करनेवाले, ५९९ **क्षेमकृत्**—शरणागतकी रक्षा करनेवाले, ६०० **शिवः**—स्मरणमात्रसे पवित्र करनेवाले कल्याणस्वरूप, ६०१ **श्रीवत्सवक्षाः**—श्रीवत्स नामक चिह्नको वक्षःस्थलमें धारण करनेवाले, ६०२ **श्रीवासः**—श्रीलक्ष्मीजीके वासस्थान, ६०३ **श्रीपतिः**—परमशक्तिरूपा श्रीलक्ष्मीजीके स्वामी, ६०४ **श्रीमतां वरः**—सब प्रकारकी सम्पत्ति और ऐश्वर्यसे युक्त ब्रह्मादि समस्त लोकपालोंसे श्रेष्ठ ॥ ७७ ॥

श्रीदः श्रीशः श्रीनिवासः श्रीनिधिः श्रीविभावनः।
श्रीधरः श्रीकरः श्रेयः श्रीमाँल्लोकत्रयाश्रयः ।७८।

६०५ **श्रीदः**—भक्तोंको श्री प्रदान करनेवाले, ६०६ **श्रीशः**—लक्ष्मीके नाथ, ६०७ **श्रीनिवासः**—श्रीलक्ष्मीजीके अन्तःकरणमें नित्य-निवास करनेवाले, ६०८ **श्रीनिधिः**—समस्त श्रियोंके आधार, ६०९ **श्रीविभावनः**—सब मनुष्यों-के लिये उनके कर्मानुसार नाना प्रकारके ऐश्वर्य प्रदान करनेवाले, ६१० **श्रीधरः**—जगज्जननी श्रीको वक्षःस्थलमें धारण करनेवाले, ६११ **श्रीकरः**—स्मरण, स्तवन और

अर्चन आदि करनेवाले भक्तोंके लिये श्रीका विस्तार करनेवाले, ६१२ श्रेयः—कल्याणस्वरूप, ६१३ श्रीमान्—सब प्रकारकी श्रियोंसे युक्त, ६१४ लोकत्रयाश्रयः—तीनों लोकोंके आधार ॥ ७८ ॥

स्वक्षः स्वङ्गः शतानन्दो नन्दिर्ज्योतिर्गणेश्वरः ।
विजितात्माविधेयात्मा सत्कीर्तिश्छिन्नसंशयः ७९

६१५ स्वक्षः—मनोहर कृपाकटाक्षसे युक्त परम सुन्दर आँखोंवाले, ६१६ स्वङ्गः—अतिशय कोमल परम सुन्दर मनोहर अङ्गोंवाले, ६१७ शतानन्दः—लीलाभेदसे सैकड़ों विभागोंमें विभक्त आनन्दस्वरूप, ६१८ नन्दिः—परमानन्द-विग्रह, ६१९ ज्योतिर्गणेश्वरः—नक्षत्रसमुदायोंके ईश्वर, ६२० विजितात्मा—जीते हुए मनवाले, ६२१ अविधेयात्मा—जिनके असली स्वरूपका किसी प्रकार भी वर्णन नहीं किया जा सके—ऐसे अनिर्वचनीयस्वरूप, ६२२ सत्कीर्तिः—सच्ची कीर्तिवाले, ६२३ छिन्नसंशयः—हथेलीमें रक्खे हुए बेरके समान सम्पूर्ण विश्वको प्रत्यक्ष देखनेवाले होनेसे सब प्रकारके संशयोंसे रहित ॥ ७९ ॥

उदीर्णः सर्वतश्चक्षुरनीशः शाश्वतस्थिरः ।
भूशयो भूषणो भूतिर्विशोकः शोकनाशनः ॥८०॥

६२४ उदीर्णः—सब प्राणियोंसे श्रेष्ठ, ६२५ सर्वतश्चक्षुः—समस्त वस्तुओंको सब दिशाओंमें सदा-सर्वदा देखनेकी शक्तिवाले, ६२६ अनीशः—जिनका दूसरा कोई शासक न हो—ऐसे स्वतन्त्र, ६२७ शाश्वतस्थिरः—सदा एकरस स्थिर रहनेवाले, निर्विकार, ६२८ भूशयः—लंका-गमनके लिये मार्गकी याचना करते समय समुद्रतटकी भूमि-पर शयन करनेवाले, ६२९ भूषणः—स्वेच्छासे नाना अवतार लेकर अपने चरणचिह्नोंसे भूमिकी शोभा बढ़ानेवाले, ६३० भूतिः—सत्तास्वरूप और समस्त विभूतियोंके आधारस्वरूप, ६३१ विशोकः—सब प्रकारसे शोकरहित, ६३२ शोकनाशनः—स्मृतिमात्रसे भक्तोंके शोकका समूल नाश करनेवाले ॥ ८० ॥

अर्चिष्मानर्चितः कुम्भो विशुद्धात्मा विशोधनः ।
अनिरुद्धोऽप्रतिरथः प्रद्युम्नोऽमितविक्रमः ॥८१॥

६३३ **अर्चिष्मान्**—चन्द्र-सूर्य आदि समस्त ज्योतियों-को देदीप्यमान करनेवाली अतिशय प्रकाशमय अनन्त किरणोंसे युक्त, ६३४ **अर्चितः**—समस्त लोकोंके पूज्य ब्रह्मादिसे भी पूजे जानेवाले, ६३५ **कुम्भः**—घटकी भाँति सबके निवासस्थान, ६३६ **विशुद्धात्मा**—परम शुद्ध निर्मल आत्मस्वरूप, ६३७ **विशोधनः**—स्मरणमात्रसे समस्त पापोंका नाश करके भक्तोंके अन्तःकरणको परम शुद्ध कर देनेवाले, ६३८ **अनिरुद्धः**—जिनको कोई बाँधकर नहीं रख सके—ऐसे चतुर्व्यूहमें अनिरुद्धस्वरूप, ६३९ **अप्रतिरथः**—प्रतिपक्षसे रहित, ६४० **प्रद्युम्नः**—परमश्रेष्ठ अपार धनसे युक्त चतुर्व्यूहमें प्रद्युम्नस्वरूप, ६४१ **अमितविक्रमः**—अपार पराक्रमी ॥ ८१ ॥

कालनेमिनिहा वीरः शौरिः शूरजनेश्वरः ।
त्रिलोकात्मा त्रिलोकेशः केशवः केशिहा हरिः ८२

६४२ **कालनेमिनिहा**—कालनेमि नामक असुरको मारनेवाले, ६४३ **वीरः**—परम शूरवीर, ६४४ **शौरिः**—शूरकुलमें उत्पन्न होनेवाले श्रीकृष्णस्वरूप, ६४५

शूरजनेश्वरः—अतिशय शूरवीरताके कारण इन्द्रादि शूरवीरोंके भी इष्ट, ६४६ त्रिलोकात्मा—अन्तर्यामी-रूपसे तीनों लोकोंके आत्मा, ६४७ त्रिलोकेशः—तीनों लोकोंके स्वामी, ६४८ केशवः—सूर्यकी किरणरूप केशवाले, ६४९ केशिहा—केशी नामके असुरको मारने-वाले, ६५० हरिः—स्मरणमात्रसे समस्त पापोंका और समूल संसारका हरण करनेवाले ॥ ८२ ॥

कामदेवः कामपालः कामी कान्तः कृतागमः ।
अनिर्देश्यवपुर्विष्णुर्वीरोऽनन्तो धनञ्जयः ॥८३॥

६५१ कामदेवः—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन चारों पुरुषार्थोंको चाहनेवाले मनुष्योंद्वारा अभिलषित समस्त कामनाओंके अधिष्ठाता परमदेव, ६५२ कामपालः—सकामी भक्तोंकी कामनाओंकी पूर्ति करनेवाले, ६५३ कामी—स्वभावसे ही पूर्णकाम और अपने प्रियतमोंको चाहनेवाले, ६५४ कान्तः—परम मनोहर श्यामसुन्दर देह धारण करनेवाले गोपीजनवल्लभ, ६५५ कृतागमः—समस्त वेद और शास्त्रोंको रचनेवाले, ६५६

अनिर्देश्यवपुः—जिनके दिव्य स्वरूपका किसी प्रकार भी वर्णन नहीं किया जा सके——ऐसे अनिर्वचनीय शरीरवाले, ६५७ विष्णुः—शेषशायी भगवान् विष्णु, ६५८ वीरः—बिना ही पैरोंके गमन करने आदि अनेक दिव्य शक्तियोंसे युक्त, ६५९ अनन्तः—जिनके स्वरूप, शक्ति, ऐश्वर्य, सामर्थ्य और गुणोंका कोई भी पार नहीं पा सकता—ऐसे अविनाशी गुण, प्रभाव और शक्तियोंसे युक्त, ६६० धनञ्जयः—अर्जुनरूपसे दिग्विजयके समय बहुत-सा धन जीतकर लानेवाले ॥ ८३ ॥

ब्रह्मण्यो ब्रह्मकृद्ब्रह्मा ब्रह्म ब्रह्मविवर्धनः ।
ब्रह्मविद्ब्राह्मणो ब्रह्मी ब्रह्मज्ञो ब्राह्मणप्रियः ॥८४॥

६६१ ब्रह्मण्यः—तप, वेद, ब्राह्मण और ज्ञानकी रक्षा करनेवाले, ६६२ ब्रह्मकृत्—पूर्वोक्त तप आदिकी रचनावाले, ६६३ ब्रह्मा—ब्रह्मारूपसे जगत्को उत्पन्न करनेवाले, ६६४ ब्रह्म-सच्चिदानन्दस्वरूप, ६६५ ब्रह्मविवर्धनः—पूर्वोक्त ब्रह्म शब्दवाची तप आदिकी वृद्धि करनेवाले, ६६६ ब्रह्मवित्—वेद और वेदार्थको पूर्णतया जाननेवाले,

६६७ ब्राह्मणः—समस्त वस्तुओंको ब्रह्मरूपसे देखनेवाले, ६६८ ब्रह्मी—ब्रह्म-शब्दवाची तपादि समस्त पदार्थोंके अधिष्ठान, ६६९ ब्रह्मज्ञः—अपने आत्मस्वरूप ब्रह्मशब्दवाची वेदको पूर्णतया यथार्थ जाननेवाले, ६७० ब्राह्मणप्रियः—ब्राह्मणोंके परम प्रिय और ब्राह्मणोंको अतिशय प्रिय माननेवाले ॥ ८४ ॥

महाक्रमो महाकर्मा महातेजा महोरगः ।
महाक्रतुर्महायज्वा महायज्ञो महाहविः ॥८५॥

६७१ महाक्रमः—बड़े वेगसे चलनेवाले, ६७२ महाकर्मा—भिन्न-भिन्न अवतारोंमें नाना प्रकारके महान् कर्म करनेवाले, ६७३ महातेजाः—जिसके तेजसे समस्त तेजस्वी देदीप्यमान होते हैं—ऐसे महान् तेजस्वी, ६७४ महोरगः—बड़े भारी सर्प यानी वासुकिस्वरूप, ६७५ महाक्रतुः—महान् यज्ञस्वरूप, ६७६ महायज्वा—बड़े यजमान यानी लोकसंग्रहके लिये बड़े-बड़े यज्ञोंका अनुष्ठान करनेवाले, ६७७ महायज्ञः—जपयज्ञ आदि भगवत्प्राप्तिके साधनरूप समस्त यज्ञ जिनकी विभूतियाँ हैं—ऐसे महान्

यज्ञस्वरूप, ६७८ **महाहविः**—ब्रह्मरूप अग्निमें हवन किये जाने योग्य प्रपञ्चरूप हवि जिनका स्वरूप है—ऐसे महान् हविःस्वरूप ॥ ८५ ॥

स्तव्यः स्तवप्रियः स्तोत्रं स्तुतिः स्तोता रणप्रियः ।
पूर्णः पूरयिता पुण्यः पुण्यकीर्तिरनामयः ॥८६॥

६७९ **स्तव्यः**—सबके द्वारा स्तुति किये जाने योग्य, ६८० **स्तवप्रियः**—स्तुतिसे प्रसन्न होनेवाले, ६८१ **स्तोत्रम्**—जिसके द्वारा भगवान्के गुण-प्रभावका कीर्तन किया जाता है, वह स्तोत्र, ६८२ **स्तुतिः**—स्तवनक्रियास्वरूप, ६८३ **स्तोता**—स्तुति करनेवाले, ६८४ **रणप्रियः**—युद्धसे प्रेम करनेवाले, ६८५ **पूर्णः**—समस्त ज्ञान, शक्ति, ऐश्वर्य और गुणोंसे परिपूर्ण, ६८६ **पूरयिता**—अपने भक्तोंको सब प्रकारसे परिपूर्ण करनेवाले, ६८७ **पुण्यः**—स्मरणमात्रसे पापोंका नाश करनेवाले पुण्यस्वरूप, ६८८ **पुण्यकीर्तिः**—परमपावन कीर्तिवाले, ६८९ **अनामयः**—आन्तरिक और बाह्य सब प्रकारकी व्याधियोंसे रहित ॥८६॥

मनोजवस्तीर्थकरो वसुरेता वसुप्रदः ।
वसुप्रदो वासुदेवो वसुर्वसुमना हविः ॥८७॥

६९० मनोजवः—मनकी भाँति वेगवाले, ६९१ तीर्थकरः—समस्त विद्याओंके रचयिता और उपदेशकर्ता, ६९२ वसुरेताः—हिरण्यमय पुरुष (प्रथम पुरुष-सृष्टिका बीज) जिनका वीर्य है—ऐसे सुवर्णवीर्य, ६९३ वसुप्रदः—प्रचुर धन प्रदान करनेवाले, ६९४ वसुप्रदः—अपने भक्तोंको मोक्षरूप महान् धन देनेवाले, ६९५ वासुदेवः—वसुदेवपुत्र श्रीकृष्ण, ६९६ वसुः—सबके अन्तःकरणमें निवास करनेवाले, ६९७ वसुमनाः—समानभावसे सबमें निवास करनेकी शक्तिसे युक्त मनवाले, ६९८ हविः—यज्ञमें हवन किये जाने योग्य हविःस्वरूप ॥ ८७ ॥

सद्गतिः सत्कृतिः सत्ता सद्भूतिः सत्परायणः ।
शूरसेनो यदुश्रेष्ठः सन्निवासः सुयामुनः ॥८८॥

६९९ सद्गतिः—सत्पुरुषोंद्वारा प्राप्त किये जाने योग्य गतिस्वरूप, ७०० सत्कृतिः—जगत्‌की रक्षा आदि सत्कार्य

करनेवाले, ७०१ सत्ता—सदा-सर्वदा विद्यमान सत्तास्वरूप, ७०२ सद्भूतिः—बहुत प्रकारसे बहुत रूपोंमें भासित होनेवाले, ७०३ सत्परायणः—सत्पुरुषोंके परम प्रापणीय स्थान, ७०४ शूरसेनः—हनुमानादि श्रेष्ठ शूरवीर योधाओंसे युक्त सेनावाले, ७०५ यदुश्रेष्ठः—यदुवंशियोंमें सर्वश्रेष्ठ, ७०६ सन्निवासः—सत्पुरुषोंके आश्रय, ७०७ सुयामुनः—जिनके परिकर यमुनातटनिवासी गोपालबाल आदि अति सुन्दर हैं, ऐसे श्रीकृष्ण ॥ ८८ ॥

भूतावासो वासुदेवः सर्वासुनिलयोऽनलः ।
दर्पहा दर्पदो दृप्तो दुर्धरोऽथापराजितः ॥८९॥

७०८ भूतावासः—समस्त प्राणियोंके मुख्य निवासस्थान, ७०९ वासुदेवः—अपनी मायासे जगत्को आच्छादित करनेवाले परमदेव, ७१० सर्वासुनिलयः—समस्त प्राणियोंके आधार, ७११ अनलः—अपार शक्ति और सम्पत्तिसे युक्त, ७१२ दर्पहा—धर्मविरुद्ध मार्गमें चलनेवालोंके घमण्डको नष्ट करनेवाले, ७१३ दर्पदः—अपने भक्तोंको विशुद्ध गौरव देनेवाले, ७१४ दृप्तः—

नित्यानन्दमग्न, ७१५ दुर्धरः-बड़ी कठिनतासे हृदयमें धारित होनेवाले, ७१६ अपराजितः-दूसरोंसे अजित अर्थात् भक्तपरवश ॥ ८९ ॥

विश्वमूर्तिर्महामूर्तिर्दीप्तमूर्तिरमूर्तिमान् ।
अनेकमूर्तिरव्यक्तः शतमूर्तिः शताननः ॥९०॥

७१७ विश्वमूर्तिः-समस्त विश्व ही जिनकी मूर्ति है—ऐसे विराट्स्वरूप, ७१८ महामूर्तिः-बड़े रूपवाले, ७१९ दीप्तमूर्तिः-स्वेच्छासे धारण किये हुए देदीप्यमान स्वरूपसे युक्त, ७२० अमूर्तिमान्-जिनकी कोई मूर्ति नहीं—ऐसे निराकार, ७२१ अनेकमूर्तिः-नाना अवतारोंमें स्वेच्छासे लोगोंका उपकार करनेके लिये बहुत मूर्तियोंको धारण करनेवाले, ७२२ अव्यक्तः-अनेक मूर्ति होते हुए भी जिनका स्वरूप किसी प्रकार व्यक्त न किया जा सके—ऐसे अप्रकटस्वरूप, ७२३ शतमूर्तिः-सैकड़ों मूर्तियोंवाले, ७२४ शताननः-सैकड़ों मुखोंवाले ॥ ९० ॥

एको नैकः सवः कः किं यत्तत्पदमनुत्तमम् ।
लोकबन्धुर्लोकनाथो माधवो भक्तवत्सलः ॥९१॥

७२५ एकः-सब प्रकारके भेद-भावोंसे रहित अद्वितीय, ७२६ नैकः-उपाधिभेदसे अनेक, ७२७ सवः-जिसमें सोमनामकी ओषधिका रस निकाला जाता है—ऐसे यज्ञस्वरूप, ७२८ कः-सुखस्वरूप, ७२९ किम्-विचारणीय ब्रह्मस्वरूप, ७३० यत्-स्वतःसिद्ध, ७३१ तत्-विस्तार करनेवाले, ७३२ पदमनुत्तमम्-मुमुक्षु पुरुषोंद्वारा प्राप्त किये जानेयोग्य अत्युत्तम परमपद, ७३३ लोकबन्धुः-समस्त प्राणियोंके हित करनेवाले परम मित्र, ७३४ लोकनाथः-सबके द्वारा याचना किये जानेयोग्य लोकस्वामी, ७३५ माधवः-मधुकुलमें उत्पन्न होनेवाले, ७३६ भक्तवत्सलः-भक्तोंसे प्रेम करनेवाले ॥ ९१ ॥

सुवर्णवर्णो हेमाङ्गो वराङ्गश्चन्दनाङ्गदी ।
वीरहा विषमः शून्यो घृताशीरचलश्चलः ॥९२॥

७३७ सुवर्णवर्णः-सोनेके समान पीतवर्णवाले, ७३८ हेमाङ्गः-सोनेके समान सुडौल चमकीले अङ्गोंवाले, ७३९ वराङ्गः-परम श्रेष्ठ अङ्ग-प्रत्यङ्गोंवाले, ७४०

चन्दनाङ्गदी–चन्दनके लेप और बाजूबंदसे सुशोभित, ७४१ वीरहा–राग-द्वेष आदि प्रबल शत्रुओंसे डरकर शरण-में आनेवालोंके अन्तःकरणमें उनका अभाव कर देनेवाले, ७४२ विषमः–जिनके समान दूसरा कोई नहीं—ऐसे अनुपम, ७४३ शून्यः–समस्त विशेषणोंसे रहित, ७४४ घृताशीः–अपने आश्रित जनोंके लिये कृपासे सने हुए द्रवित सङ्कल्प करनेवाले, ७४५ अचलः–किसी प्रकार भी विचलित न होनेवाले अविचल, ७४६ चलः–वायुरूपसे सर्वत्र गमन करनेवाले ॥ ९२ ॥

अमानी मानदो मान्यो लोकस्वामी त्रिलोकधृक् ।
सुमेधा मेधजो धन्यः सत्यमेधा धराधरः ॥९३॥

७४७ अमानी–स्वयं मान न चाहनेवाले अभिमान-रहित, ७४८ मानदः–दूसरोंको मान देनेवाले, ७४९ मान्यः–सबके पूजनेयोग्य माननीय, ७५० लोकस्वामी–चौदह भुवनोंके स्वामी, ७५१ त्रिलोकधृक्–तीनों लोकों-को धारण करनेवाले, ७५२ सुमेधाः–अति उत्तम सुन्दर बुद्धिवाले, ७५३ मेधजः–यज्ञमें प्रकट होनेवाले, ७५४

धन्यः—नित्य कृतकृत्य होनेके कारण सर्वथा धन्यवादके पात्र, ७५५ सत्यमेधाः—सच्ची और श्रेष्ठ बुद्धिवाले, ७५६ धराधरः—अनन्त भगवान्‌के रूपसे पृथ्वीको धारण करनेवाले ॥ ९३ ॥

तेजोवृषो द्युतिधरः सर्वशस्त्रभृतां वरः ।
प्रग्रहो निग्रहो व्यग्रो नैकशृङ्गो गदाग्रजः ॥९४॥

७५७ तेजोवृषः—आदित्यरूपसे तेजकी वर्षा करनेवाले और भक्तोंपर अपने अमृतमय तेजकी वर्षा करनेवाले, ७५८ द्युतिधरः—परम कान्तिको धारण करनेवाले, ७५९ सर्वशस्त्रभृतां वरः—समस्त शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ, ७६० प्रग्रहः—भक्तोंके द्वारा अर्पित पत्र-पुष्पादिको ग्रहण करनेवाले, ७६१ निग्रहः—सबका निग्रह करनेवाले, ७६२ व्यग्रः—अपने भक्तोंको अभीष्ट फल देनेमें लगे हुए, ७६३ नैकशृङ्गः—नाम, आख्यात, उपसर्ग और निपातरूप चार सींगोंको धारण करनेवाले शब्दब्रह्मस्वरूप, ७६४ गदाग्रजः—गदसे पहले जन्म लेनेवाले ॥ ९४ ॥

चतुर्मूर्तिश्चतुर्बाहुश्चतुर्व्यूहश्चतुर्गतिः ।
चतुरात्मा चतुर्भावश्चतुर्वेदविदेकपात् ॥९५॥

७६५ **चतुर्मूर्तिः**—राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्नरूप चार मूर्तियोंवाले, ७६६ **चतुर्बाहुः**—चार भुजाओंवाले, ७६७ **चतुर्व्यूहः**—वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध—इन चार व्यूहोंसे युक्त, ७६८ **चतुर्गतिः**—सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य, सायुज्यरूप चार परम गतिस्वरूप, ७६९ **चतुरात्मा**—मन, बुद्धि, अहङ्कार और चित्तरूप चार अन्तःकरणवाले, ७७० **चतुर्भावः**—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन चारों पुरुषार्थोंके उत्पत्तिस्थान, ७७१ **चतुर्वेदवित्**—चारों वेदोंके अर्थको भलीभाँति जाननेवाले, ७७२ **एकपात्**—एक पादवाले यानी एक पाद (अंश)से समस्त विश्वको व्याप्त करनेवाले ॥९५॥

समावर्तोऽनिवृत्तात्मा दुर्जयो दुरतिक्रमः ।
दुर्लभो दुर्गमो दुर्गो दुरावासो दुरारिहा ॥९६॥

७७३ **समावर्तः**—संसारचक्रको भलीभाँति घुमाने-

वाले, ७७४ अनिवृत्तात्मा–सर्वत्र विद्यमान होनेके कारण जिनका आत्मा कहींसे भी (हटा हुआ) नहीं है, ऐसे, ७७५ दुर्जयः–किसीसे भी जीतनेमें न आनेवाले, ७७६ दुरतिक्रमः–जिनकी आज्ञाका कोई उल्लङ्घन नहीं कर सके, ऐसे, ७७७ दुर्लभः–बिना भक्तिके प्राप्त न होनेवाले, ७७८ दुर्गमः–कठिनतासे जाननेमें आनेवाले, ७७९ दुर्गः–कठिनतासे प्राप्त होनेवाले, ७८० दुरावासः–बड़ी कठिनतासे योगीजनोंद्वारा हृदयमें बसाये जानेवाले, ७८१ दुरारिहा–दुष्ट मार्गमें चलनेवाले दैत्योंका वध करनेवाले ॥ ९६ ॥

शुभाङ्गो लोकसारङ्गः सुतन्तुस्तन्तुवर्धनः ।
इन्द्रकर्मा महाकर्मा कृतकर्मा कृतागमः ॥९७॥

७८२ शुभाङ्गः–कल्याणकारक सम्बोधन (नाम)वाले, ७८३ लोकसारङ्गः–लोकोंके सारको ग्रहण करनेवाले, ७८४ सुतन्तुः–सुन्दर विस्तृत जगत्‌रूप तन्तुवाले, ७८५ तन्तुवर्धनः–पूर्वोक्त जगत्-तन्तुको बढ़ानेवाले, ७८६ इन्द्रकर्मा–इन्द्रके समान कर्मवाले, ७८७ महाकर्मा–

बड़े-बड़े कर्म करनेवाले, ७८८ कृतकर्मा—जो समस्त कर्तव्य कर्म कर चुके हों, जिनका कोई कर्तव्य शेष न रहा हो—ऐसे कृतकृत्य, ७८९ कृतागमः—स्वोचित अनेक कार्योंको पूर्ण करनेके लिये अवतार धारण करके आनेवाले ॥ ९७ ॥

उद्भवः सुन्दरः सुन्दो रत्ननाभः सुलोचनः ।
अर्को वाजसनः शृङ्गी जयन्तः सर्वविज्जयी ॥९८॥

७९० उद्भवः—स्वेच्छासे श्रेष्ठ जन्म धारण करनेवाले, ७९१ सुन्दरः—सबसे अधिक भाग्यशाली होनेके कारण परम सुन्दर, ७९२ सुन्दः—परम करुणाशील, ७९३ रत्ननाभः—रत्नके समान सुन्दर नाभिवाले, ७९४ सुलोचनः—सुन्दर नेत्रोंवाले, ७९५ अर्कः—ब्रह्मादि पूज्य पुरुषोंके भी पूजनीय, ७९६ वाजसनः—याचकोंको अन्न प्रदान करनेवाले, ७९७ शृङ्गी—प्रलयकालमें सींगयुक्त मत्स्यविशेषका रूप धारण करनेवाले, ७९८ जयन्तः—शत्रुओंको पूर्णतया जीतनेवाले, ७९९ सर्वविज्जयी—सर्वज्ञ यानी सब कुछ जाननेवाले और सबको जीतनेवाले ॥९८॥

सुवर्णविन्दुरक्षोभ्यः सर्ववागीश्वरेश्वरः ।
महाह्रदो महागर्तो महाभूतो महानिधिः ॥९९॥

८०० सुवर्णविन्दुः—सुन्दर अक्षर और बिन्दुसे युक्त ओंकारस्वरूप नाम ब्रह्म, ८०१ अक्षोभ्यः—किसीके द्वारा भी क्षुभित न किये जा सकनेवाले, ८०२ सर्व-वागीश्वरेश्वरः—समस्त वाणीपतियोंके यानी ब्रह्मादिके भी स्वामी, ८०३ महाह्रदः—ध्यान करनेवाले जिसमें गोता लगाकर आनन्दमें मग्न होते हैं, ऐसे परमानन्दके महान् सरोवर, ८०४ महागर्तः—मायारूप महान् गर्तवाले, ८०५ महाभूतः—त्रिकालमें कभी नष्ट न होने-वाले महाभूतस्वरूप, ८०६ महानिधिः—सबके महान् निवास-स्थान ॥ ९९ ॥

कुमुदः कुन्दरः कुन्दः पर्जन्यः पावनोऽनिलः ।
अमृताशोऽमृतवपुः सर्वज्ञः सर्वतोमुखः ॥१००॥

८०७ कुमुदः—कु अर्थात् पृथ्वीको उसका भार उतारकर प्रसन्न करनेवाले, ८०८ कुन्दरः—हिरण्याक्षको

मारनेके लिये पृथ्वीको विदीर्ण करनेवाले, ८०९ कुन्दः—कश्यपजीको पृथ्वी प्रदान करनेवाले, ८१० पर्जन्यः—बादलकी भाँति समस्त इष्ट वस्तुओंकी वर्षा करनेवाले, ८११ पावनः—स्मरणमात्रसे पवित्र करनेवाले, ८१२ अनिलः—सदा प्रबुद्ध रहनेवाले, ८१३ अमृताशः—जिनकी आशा कभी विफल न हो—ऐसे अमोघसङ्कल्प, ८१४ अमृतवपुः—जिनका कलेवर कभी नष्ट न हो—ऐसे नित्य-विग्रह, ८१५ सर्वज्ञः—सदा-सर्वदा सब कुछ जाननेवाले, ८१६ सर्वतोमुखः—सब ओर मुखवाले यानी जहाँ कहीं भी उनके भक्त भक्तिपूर्वक पत्र-पुष्पादि जो कुछ भी अर्पण करें, उसे भक्षण करनेवाले ॥ १०० ॥

सुलभः सुव्रतः सिद्धः शत्रुजिच्छत्रुतापनः ।
न्यग्रोधोदुम्बरोऽश्वत्थश्चाणूरान्ध्रनिषूदनः ।१०१।

८१७ सुलभः—नित्य-निरन्तर चिन्तन करनेवालेको और एकनिष्ठ श्रद्धालु भक्तको बिना ही परिश्रमके सुगमतासे प्राप्त होनेवाले, ८१८ सुव्रतः—सुन्दर भोजन करनेवाले यानी अपने भक्तोंद्वारा प्रेमपूर्वक अर्पण किये

हुए पत्र-पुष्पादि मामूली भोजनको भी परम श्रेष्ठ मानकर खानेवाले, ८१९ सिद्धः—स्वभावसे ही समस्त सिद्धियोंसे युक्त, ८२० शत्रुजित्—देवता और सत्पुरुषोंके शत्रुओंको अपने शत्रु मानकर जीतनेवाले, ८२१ शत्रुतापनः—शत्रुओंको तपानेवाले, ८२२ न्यग्रोधः—वटवृक्षरूप, ८२३ उदुम्बरः—कारणरूपसे आकाशके भी ऊपर रहनेवाले, ८२४ अश्वत्थः—पीपल-वृक्षस्वरूप, ८२५ चाणूरान्ध्रनिषूदनः—चाणूर नामक अन्ध्रजातिके वीर मल्लको मारनेवाले ॥ १०१ ॥

सहस्रार्चिः सप्तजिह्वः सप्तैधाः सप्तवाहनः ।
अमूर्तिरनघोऽचिन्त्यो भयकृद्भयनाशनः ।१०२।

८२६ सहस्रार्चिः—अनन्त किरणोंवाले, ८२७ सप्तजिह्वः—काली, कराली, मनोजवा, सुलोहिता, धूम्रवर्णा, स्फुलिङ्गिनी और विश्वरुचि—इन सात जिह्वावाले अग्निस्वरूप, ८२८ सप्तैधाः—सात दीप्तिवाले अग्निस्वरूप, ८२९ सप्तवाहनः—सात घोड़ोंवाले सूर्यरूप, ८३० अमूर्तिः—मूर्तिरहित निराकार, ८३१ अनघः—सब

प्रकारसे निष्पाप, ८३२ अचिन्त्यः–किसी प्रकार भी चिन्तन करनेमें न आनेवाले, ८३३ भयकृत्–दुष्टोंको भयभीत करनेवाले, ८३४ भयनाशनः–स्मरण करनेवालोंके और सत्पुरुषोंके भयका नाश करनेवाले ॥१०२॥

अणुर्बृहत्कृशः स्थूलो गुणभृन्निर्गुणो महान्।
अधृतः स्वधृतः स्वास्यः प्राग्वंशो वंशवर्धनः॥१०३॥

८३५ अणुः–अत्यन्त सूक्ष्म, ८३६ बृहत्–सबसे बड़े, ८३७ कृशः–अत्यन्त पतले और हलके, ८३८ स्थूलः–अत्यन्त मोटे और भारी, ८३९ गुणभृत्–समस्त गुणोंको धारण करनेवाले, ८४० निर्गुणः–सत्त्व, रज और तम—इन तीनों गुणोंसे रहित, ८४१ महान्–गुण, प्रभाव, ऐश्वर्य और ज्ञान आदिकी अतिशयताके कारण परम महत्त्वसम्पन्न, ८४२ अधृतः–जिनको कोई भी धारण नहीं कर सकता—ऐसे निराधार, ८४३ स्वधृतः–अपने-आपसे धारित यानी अपनी ही महिमामें स्थित, ८४४ स्वास्यः–सुन्दर मुखवाले, ८४५ प्राग्वंशः–जिनसे समस्त वंशपरम्परा आरम्भ हुई है—ऐसे समस्त

पूर्वजोंके भी पूर्वज आदिपुरुष, ८४६ वंशवर्धनः–जगत्-प्रपञ्चरूप वंशको और यादव-वंशको बढ़ानेवाले ॥१०३॥

भारभृत्कथितो योगी योगीशः सर्वकामदः ।
आश्रमः श्रमणः क्षामः सुपर्णो वायुवाहनः ।१०४।

८४७ **भारभृत्**–शेषनाग आदिके रूपमें पृथ्वीका भार उठानेवाले और अपने भक्तोंके योगक्षेमरूप भारको वहन करनेवाले, ८४८ **कथितः**–वेद-शास्त्र और महापुरुषोंद्वारा जिनके गुण, प्रभाव, ऐश्वर्य और स्वरूपका बारंबार कथन किया गया है, ऐसे सबके द्वारा वर्णित, ८४९ **योगी**–नित्य समाधियुक्त, ८५० **योगीशः**–समस्त योगियोंके स्वामी, ८५१ **सर्वकामदः**–समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाले, ८५२ **आश्रमः**–सबको विश्राम देनेवाले, ८५३ **श्रमणः**–दुष्टोंको संतप्त करनेवाले, ८५४ **क्षामः**–प्रलयकालमें सब प्रजाका क्षय करनेवाले, ८५५ **सुपर्णः**–वेदरूप सुन्दर पत्तोंवाले (संसारवृक्षस्वरूप), ८५६ **वायुवाहनः**–वायुको गमन करनेके लिये शक्ति देनेवाले ॥१०४॥

धनुर्धरो धनुर्वेदो दण्डो दमयिता दमः ।
अपराजितः सर्वसहो नियन्तानियमोऽयमः १०५

८५७ धनुर्धरः—धनुषधारी श्रीराम, ८५८ धनुर्वेदः—धनुर्विद्याको जाननेवाले श्रीराम, ८५९ दण्डः—दमन करनेवालोंकी दमनशक्ति, ८६० दमयिता—यम और राजा आदिके रूपमें दमन करनेवाले, ८६१ दमः—दण्डका कार्य यानी जिनको दण्ड दिया जाता है, उनका सुधार, ८६२ अपराजितः—शत्रुओंद्वारा पराजित न होनेवाले; ८६३ सर्वसहः—सब कुछ सहन करनेकी सामर्थ्यसे युक्त, अतिशय तितिक्षु, ८६४ नियन्ता—सबको अपने-अपने कर्तव्यमें नियुक्त करनेवाले, ८६५ अनियमः—नियमोंसे न बँधे हुए जिनका कोई भी नियन्त्रण करनेवाला नहीं ऐसे परमस्वतन्त्र, ८६६ अयमः—जिनका कोई शासक नहीं अथवा मृत्युरहित ॥ १०५ ॥

सत्त्ववान् सात्त्विकः सत्यः सत्यधर्मपरायणः ।
अभिप्रायः प्रियार्होऽर्हः प्रियकृत्प्रीतिवर्धनः १०६

८६७ सत्त्ववान्—बल, वीर्य, सामर्थ्य आदि समस्त सत्त्वोंसे सम्पन्न, ८६८ सात्त्विकः—सत्त्वगुणप्रधानविग्रह, ८६९ सत्यः—सत्यभाषणस्वरूप, ८७० सत्यधर्मपरायणः—यथार्थ भाषण और धर्मके परम आधार, ८७१ अभिप्रायः—प्रेमीजन जिनको चाहते हैं—ऐसे परम इष्ट, ८७२ प्रियार्हः—अत्यन्त प्रियवस्तु समर्पण करनेके लिये योग्य पात्र, ८७३ अर्हः—सबके परम पूज्य, ८७४ प्रियकृत्—भजनेवालोंका प्रिय करनेवाले, ८७५ प्रीतिवर्धनः—अपने प्रेमियोंके प्रेमको बढ़ानेवाले ॥ १०६ ॥

विहायसगतिर्ज्योतिः सुरुचिर्हुतभुग्विभुः ।
रविर्विरोचनः सूर्यः सविता रविलोचनः ॥१०७॥

८७६ विहायसगतिः—आकाशमें गमन करनेवाले, ८७७ ज्योतिः—स्वयंप्रकाशस्वरूप, ८७८ सुरुचिः—सुन्दर रुचि और कान्तिवाले, ८७९ हुतभुक्—यज्ञमें हवन की हुई समस्त हविको अग्निरूपसे भक्षण करनेवाले, ८८० विभुः—सर्वव्यापी, ८८१ रविः—समस्त रसोंका शोषण करनेवाले सूर्य, ८८२ विरोचनः—विविध प्रकारसे

प्रकाश फैलानेवाले, ८८३ **सूर्यः**—शोभाको प्रकट करनेवाले, ८८४ **सविता**—समस्त जगत्‌को प्रसव यानी उत्पन्न करनेवाले, ८८५ **रविलोचनः**—सूर्यरूप नेत्रोंवाले ॥ १०७ ॥

अनन्तो हुतभुग्भोक्ता सुखदो नैकजोऽग्रजः ।
अनिर्विण्णः सदामर्षी लोकाधिष्ठानमद्भुतः १०८

८८६ **अनन्तः**—सब प्रकारसे अन्तरहित, ८८७ **हुतभुक्**—यज्ञमें हवन की हुई सामग्रीको उन-उन देवताओंके रूपमें भक्षण करनेवाले, ८८८ **भोक्ता**—प्रकृतिको भोगनेवाले, ८८९ **सुखदः**—भक्तोंको दर्शनरूप परम सुख देनेवाले, ८९० **नैकजः**—धर्मरक्षा, साधुरक्षा आदि परम विशुद्ध हेतुओंसे स्वेच्छापूर्वक अनेक जन्म धारण करनेवाले, ८९१ **अग्रजः**—सबसे पहले जन्मनेवाले आदि पुरुष, ८९२ **अनिर्विण्णः**—पूर्णकाम होनेके कारण विरक्तिसे रहित, ८९३ **सदामर्षी**—सत्पुरुषोंपर क्षमा करनेवाले, ८९४ **लोकाधिष्ठानम्**—समस्त लोकोंके आधार, ८९५ **अद्भुतः**—अत्यन्त आश्चर्यमय ॥ १०८ ॥

सनात्सनातनतमः कपिलः कपिरप्ययः ।
स्वस्तिदः स्वस्तिकृत्स्वस्ति स्वस्तिभुक्स्वस्तिदक्षिणः ॥

८९६ **सनात्**—अनन्तकालस्वरूप, ८९७ **सनातनतमः**—सबके कारण होनेसे ब्रह्मादि पुरुषोंकी अपेक्षा भी परम पुराणपुरुष, ८९८ **कपिलः**—महर्षि कपिल, ८९९ **कपिः**—सूर्यदेव, ९०० **अप्ययः**—सम्पूर्ण जगत्के लयस्थान, ९०१ **स्वस्तिदः**—परमानन्दरूप मङ्गल देनेवाले, ९०२ **स्वस्तिकृत्**—आश्रितजनोंका कल्याण करनेवाले, ९०३ **स्वस्ति**—कल्याणस्वरूप, ९०४ **स्वस्तिभुक्**—भक्तोंके परम कल्याणकी रक्षा करनेवाले, ९०५ **स्वस्तिदक्षिणः**—कल्याण करनेमें समर्थ और शीघ्र कल्याण करनेवाले ॥ १०९ ॥

अरौद्रः कुण्डली चक्री विक्रम्यूर्जितशासनः ।
शब्दातिगः शब्दसहः शिशिरः शर्वरीकरः ११०

९०६ **अरौद्रः**—सब प्रकारके रुद्र (क्रूर) भावोंसे रहित शान्तमूर्ति, ९०७ **कुण्डली**—सूर्यके समान प्रकाशमान मकराकृति कुण्डलोंको धारण करनेवाले, ९०८ **चक्री**—

सुदर्शनचक्रको धारण करनेवाले, ९०९ विक्रमी-सबसे विलक्षण पराक्रमशील, ९१० ऊर्जितशासनः-जिनका श्रुति-स्मृतिरूप शासन अत्यन्त श्रेष्ठ है—ऐसे अति श्रेष्ठ शासन करनेवाले, ९११ शब्दातिगः-शब्दकी जहाँ पहुँच नहीं, ऐसे वाणीके अविषय, ९१२ शब्दसहः-समस्त वेद-शास्त्र जिनकी महिमाका बखान करते हैं, ऐसे, ९१३ शिशिरः-त्रितापपीड़ितोंको शान्ति देनेवाले शीतलमूर्ति, ९१४ शर्वरीकरः-ज्ञानियोंकी रात्रि संसार और अज्ञानियोंकी रात्रि ज्ञान-इन दोनोंको उत्पन्न करनेवाले ॥११०॥

अक्रूरः पेशलो दक्षो दक्षिणः क्षमिणां वरः ।
विद्वत्तमो वीतभयः पुण्यश्रवणकीर्तनः ॥१११॥

९१५ अक्रूरः-सब प्रकारके क्रूरभावोंसे रहित, ९१६ पेशलः-मन, वाणी और कर्म—सभी दृष्टियोंसे सुन्दर होनेके कारण परम सुन्दर, ९१७ दक्षः-सब प्रकारसे समृद्ध, परमशक्तिशाली और क्षणमात्रमें बड़े-से-बड़ा कार्य कर देनेवाले महान् कार्यकुशल, ९१८ दक्षिणः-संहारकारी, ९१९ क्षमिणां वरः-क्षमा करनेवालोंमें

सर्वश्रेष्ठ, ९२० **विद्वत्तमः**—विद्वानोंमें सर्वश्रेष्ठ परम विद्वान्, ९२१ **वीतभयः**—सब प्रकारके भयसे रहित, ९२२ **पुण्यश्रवणकीर्तनः**—जिनके नाम, गुण, महिमा और स्वरूपका श्रवण और कीर्तन परम पुण्य यानी परमपावन हैं ऐसे ॥ १११ ॥

उत्तारणो दुष्कृतिहा पुण्यो दुःस्वप्ननाशनः ।
वीरहा रक्षणः सन्तो जीवनः पर्यवस्थितः ॥११२॥

९२३ **उत्तारणः**—संसार-सागरसे पार करनेवाले, ९२४ **दुष्कृतिहा**—पापोंका और पापियोंका नाश करनेवाले, ९२५ **पुण्यः**—स्मरण आदि करनेवाले समस्त पुरुषोंको पवित्र कर देनेवाले, ९२६ **दुःस्वप्ननाशनः**—ध्यान, स्मरण, कीर्तन और पूजन करनेसे बुरे स्वप्नोंका और संसाररूप दुःस्वप्नका नाश करनेवाले, ९२७ **वीरहा**—शरणागतोंकी विविध गतियोंका यानी संसार-चक्रका नाश करनेवाले, ९२८ **रक्षणः**—सब प्रकारसे रक्षा करनेवाले, ९२९ **सन्तः**—विद्या और विनयका प्रचार करनेके लिये संतोंके रूपमें प्रकट होनेवाले, ९३० **जीवनः**—समस्त प्रजाको प्राणरूपसे

जीवित रखनेवाले, ९३१ पर्यवस्थितः—समस्त विश्वको व्याप्त करके स्थित रहनेवाले ॥ ११२ ॥

अनन्तरूपोऽनन्तश्रीर्जितमन्युर्भयापहः ।
चतुरस्रो गभीरात्मा विदिशो व्यादिशो दिशः ॥

९३२ **अनन्तरूपः**—अनन्त—अमितरूपवाले, ९३३ **अनन्तश्रीः**—अनन्तश्री यानी अपरिमित पराशक्तियोंसे युक्त, ९३४ **जितमन्युः**—सब प्रकारसे क्रोधको जीत लेनेवाले, ९३५ **भयापहः**—भक्तभयहारी, ९३६ **चतुरस्रः**—चार वेदरूप कोणोंवाले मङ्गलमूर्ति और न्यायशील, ९३७ **गभीरात्मा**—गम्भीर मनवाले, ९३८ **विदिशः**—अधिकारियोंको उनके कर्मानुसार विभागपूर्वक नाना प्रकारके फल देनेवाले, ९३९ **व्यादिशः**—सबको यथा-योग्य विविध आज्ञा देनेवाले, ९४० **दिशः**—वेदरूपसे समस्त कर्मोंका फल बतलानेवाले ॥ ११३ ॥

अनादिर्भूर्भुवो लक्ष्मीः सुवीरो रुचिराङ्गदः ।
जननो जनजन्मादिर्भीमो भीमपराक्रमः ॥११४॥

९४१ **अनादिः**–जिसका आदि कोई न हो ऐसे सबके कारणस्वरूप, ९४२ **भूर्भुवः**–पृथ्वीके भी आधार, ९४३ **लक्ष्मीः**–समस्त शोभायमान वस्तुओंकी शोभा, ९४४ **सुवीरः**–आश्रित जनोंके अन्तःकरणमें सुन्दर कल्याणमयी विविध स्फुरणा करनेवाले, ९४५ **रुचिराङ्गदः**–परम रुचिकर कल्याणमय बाजूबंदोंको धारण करनेवाले, ९४६ **जननः**–प्राणीमात्रको उत्पन्न करनेवाले, ९४७ **जनजन्मादिः**–जन्म लेनेवालोंके जन्मके मूल कारण, ९४८ **भीमः**–सबको भय देनेवाले, ९४९ **भीमपराक्रमः**–अतिशय भय उत्पन्न करनेवाले, पराक्रमसे युक्त ॥११४॥

आधारनिलयोऽधाता पुष्पहासः प्रजागरः ।
ऊर्ध्वगः सत्पथाचारः प्राणदः प्रणवः पणः ।११५।

९५० **आधारनिलयः**–आधारस्वरूप पृथ्वी आदि समस्त भूतोंके स्थान, ९५१ **अधाता**–जिसका कोई भी बनानेवाला न हो ऐसे स्वयंस्थित, ९५२ **पुष्पहासः**–पुष्पकी भाँति विकसित हास्यवाले, ९५३ **प्रजागरः**–भलीप्रकार जाग्रत् रहनेवाले नित्यप्रबुद्ध, ९५४ **ऊर्ध्वगः**–

सबसे ऊपर रहनेवाले, ९५५ सत्पथाचारः–सत्पुरुषोंके मार्गका आचरण करनेवाले मर्यादापुरुषोत्तम, ९५६ प्राणदः–परीक्षित् आदि मरे हुओंको भी जीवन देनेवाले, ९५७ प्रणवः–ॐकार-स्वरूप, ९५८ पणः–यथायोग्य व्यवहार करनेवाले ॥ ११५ ॥

प्रमाणं प्राणनिलयः प्राणभृत्प्राणजीवनः ।
तत्त्वं तत्त्वविदेकात्मा जन्ममृत्युजरातिगः ।११६।

९५९ प्रमाणम्–स्वतःसिद्ध होनेसे स्वयं प्रमाण-स्वरूप, ९६० प्राणनिलयः–प्राणोंके आधारभूत, ९६१ प्राणभृत्–समस्त प्राणोंका पोषण करनेवाले, ९६२ प्राणजीवनः–प्राणवायुके सञ्चारसे प्राणियोंको जीवित रखनेवाले, ९६३ तत्त्वम्–यथार्थ तत्त्वरूप, ९६४ तत्त्ववित्–यथार्थ तत्त्वको पूर्णतया जाननेवाले, ९६५ एकात्मा–अद्वितीयस्वरूप, ९६६ जन्ममृत्युजरातिगः–जन्म, मृत्यु और बुढ़ापा आदि शरीरके धर्मोंसे सर्वथा अतीत ॥ ११६ ॥

भूर्भुवःस्वस्तरुस्तारः सविता प्रपितामहः ।
यज्ञो यज्ञपतिर्यज्वा यज्ञाङ्गो यज्ञवाहनः ॥११७॥

९६७ भूर्भुवःस्वस्तरुः—भूः भुवः स्वःरूप तीनों लोकोंको व्याप्त करनेवाले और संसारवृक्षस्वरूप, ९६८ तारः—संसार-सागरसे पार उतारनेवाले, ९६९ सविता—सबको उत्पन्न करनेवाले पितामह, ९७० प्रपितामहः—पितामह ब्रह्माके भी पिता, ९७१ यज्ञः—यज्ञस्वरूप, ९७२ यज्ञपतिः—समस्त यज्ञोंके अधिष्ठाता, ९७३ यज्वा—यजमानरूपसे यज्ञ करनेवाले, ९७४ यज्ञाङ्गः—समस्त यज्ञरूप अङ्गोंवाले, ९७५ यज्ञवाहनः—यज्ञोंको चलानेवाले ॥११७॥

यज्ञभृद्यज्ञकृद्यज्ञी यज्ञभुग्यज्ञसाधनः ।
यज्ञान्तकृद्यज्ञगुह्यमन्नमन्नाद एव च ॥११८॥

९७६ यज्ञभृत्—यज्ञोंका धारण-पोषण करनेवाले, ९७७ यज्ञकृत्—यज्ञोंके रचयिता, ९७८ यज्ञी—समस्त यज्ञ जिसमें समाप्त होते हैं—ऐसे यज्ञशेषी, ९७९ यज्ञभुक्—समस्त यज्ञोंके भोक्ता, ९८० यज्ञसाधनः—ब्रह्मयज्ञ, जपयज्ञ आदि बहुत-से यज्ञ जिनकी प्राप्तिके साधन हैं, ऐसे, ९८१ यज्ञान्तकृत्—यज्ञोंका अन्त करनेवाले

यानी उनका फल देनेवाले, ९८२ यज्ञगुह्यम्–यज्ञोंमें गुप्त ज्ञानस्वरूप और निष्काम यज्ञस्वरूप, ९८३ अन्नम्–समस्त प्राणियोंके अन्न यानी अन्नकी भाँति उनकी सब प्रकारसे तुष्टि-पुष्टि करनेवाले तथा ९८४ अन्नादः–समस्त अन्नोंके भोक्ता भी ॥ ११८ ॥

आत्मयोनिः स्वयंजातो वैखानःसामगायनः ।
देवकीनन्दनः स्रष्टा क्षितीशः पापनाशनः॥११९॥

९८५ आत्मयोनिः–जिनका कारण दूसरा कोई नहीं—ऐसे स्वयं योनिस्वरूप, ९८६ स्वयंजातः–स्वयं अपने आप स्वेच्छापूर्वक प्रकट होनेवाले, ९८७ वैखानः–पातालवासी हिरण्याक्षका वध करनेके लिये पृथ्वीको खोदनेवाले, ९८८ सामगायनः–सामवेदका गान करनेवाले, ९८९ देवकीनन्दनः–देवकीपुत्र, ९९० स्रष्टा–समस्त लोकोंके रचयिता, ९९१ क्षितीशः–पृथ्वीपति, ९९२ पापनाशनः–स्मरण, कीर्तन, पूजन और ध्यान आदि करनेसे समस्त पापसमुदायका नाश करनेवाले ॥ ११९ ॥

शङ्खभृन्नन्दकी चक्री शार्ङ्गधन्वा गदाधरः ।
रथाङ्गपाणिरक्षोभ्यः सर्वप्रहरणायुधः ॥१२०॥

९९३ **शङ्खभृत्**—पाञ्चजन्य शङ्खको धारण करनेवाले, ९९४ **नन्दकी**—नन्दकनामक खड्ग धारण करनेवाले, ९९५ **चक्री**—संसार-चक्रको चलानेवाले, ९९६ **शार्ङ्गधन्वा**—शार्ङ्गधनुषधारी, ९९७ **गदाधरः**—कौमोदकी नामकी गदा धारण करनेवाले, ९९८ **रथाङ्गपाणिः**—भीष्मकी प्रतिज्ञा रखनेके लिये सुदर्शन चक्रको हाथमें धारण करनेवाले, ९९९ **अक्षोभ्यः**—जो किसी प्रकार भी विचलित नहीं किये जा सके, ऐसे, १००० **सर्वप्रहरणायुधः**—ज्ञात और अज्ञात जितने भी युद्धादिमें काम आनेवाले हथियार हैं, उन सबको धारण करनेवाले ॥ १२० ॥

॥ सर्वप्रहरणायुध ॐ नम इति ॥

यहाँ हजार नामोंकी समाप्ति दिखलानेके लिये अन्तिम नामको दुबारा लिखा गया है, मङ्गलवाची होनेसे ॐकारका स्मरण किया गया है, अन्तमें नमस्कार करके भगवान्की पूजा की गयी है ।

इतीदं कीर्तनीयस्य केशवस्य महात्मनः ।
नाम्नां सहस्रं दिव्यानामशेषेण प्रकीर्तितम्।१२१।

इस प्रकार यह कीर्तन करनेयोग्य महात्मा केशवके दिव्य एक हजार नामोंका पूर्णरूपसे वर्णन कर दिया। १२१।

य इदं शृणुयान्नित्यं यश्चापि परिकीर्तयेत् ।
नाशुभं प्राप्नुयात्किञ्चित्सोऽमुत्रेह च मानवः१२२

जो मनुष्य इस विष्णुसहस्रनामका सदा श्रवण करता है और जो प्रतिदिन इसका कीर्तन या पाठ करता है, उसका इस लोकमें तथा परलोकमें कहीं भी कुछ अशुभ नहीं होता ॥ १२२ ॥

वेदान्तगो ब्राह्मणः स्यात्क्षत्रियो विजयी भवेत् ।
वैश्यो धनसमृद्धः स्याच्छूद्रः सुखमवाप्नुयात् ॥

इस विष्णुसहस्रनामका पाठ करनेसे अथवा कीर्तन करनेसे ब्राह्मण वेदान्तपारगामी हो जाता है यानी उपनिषदोंके अर्थरूप परब्रह्मको पा लेता है । क्षत्रिय युद्धमें विजय पाता है, वैश्य व्यापारमें धन पाता है और शूद्र सुख पाता है ॥ १२३ ॥

धर्मार्थी प्राप्नुयाद्धर्ममर्थार्थी चार्थमाप्नुयात् ।
कामानवाप्नुयात्कामी प्रजार्थी प्राप्नुयात्प्रजाम् ॥

धर्मकी इच्छावाला धर्मको पाता है, अर्थकी इच्छावाला अर्थ पाता है, भोगोंकी इच्छावाला भोग पाता है और प्रजाकी इच्छावाला प्रजा पाता है ॥ १२४ ॥

भक्तिमान्यः सदोत्थाय शुचिस्तद्गतमानसः ।
सहस्रं वासुदेवस्य नाम्नामेतत्प्रकीर्तयेत् ॥१२५॥
यशः प्राप्नोति विपुलं ज्ञातिप्राधान्यमेव च ।
अचलां श्रियमाप्नोति श्रेयः प्राप्नोत्यनुत्तमम् १२६
न भयं क्वचिदाप्नोति वीर्यं तेजश्च विन्दति ।
भवत्यरोगो द्युतिमान्बलरूपगुणान्वितः ॥१२७॥

जो भक्तिमान् पुरुष सदा प्रातःकालमें उठकर स्नान करके पवित्र हो मनमें विष्णुका ध्यान करता हुआ इस वासुदेव-सहस्रनामका भली प्रकार पाठ करता है, वह महान् यश पाता है, जातिमें महत्त्व पाता है, अचल सम्पत्ति पाता है और अति उत्तम कल्याण पाता है तथा

उसको कहीं भय नहीं होता। वह वीर्य और तेजको पाता है तथा आरोग्यवान्, कान्तिमान्, बलवान्, रूपवान् और सर्वगुणसम्पन्न हो जाता है ॥ १२५–१२७ ॥

रोगार्तो मुच्यते रोगाद्बद्धो मुच्येत बन्धनात् ।
भयान्मुच्येत भीतस्तु मुच्येतापन्न आपदः ।१२८।

रोगातुर पुरुष रोगसे छूट जाता है, बन्धनमें पड़ा हुआ पुरुष बन्धनसे छूट जाता है, भयभीत भयसे छूट जाता है और आपत्तिमें पड़ा हुआ आपत्तिसे छूट जाता है ॥ १२८ ॥

दुर्गाण्यतितरत्याशु पुरुषः पुरुषोत्तमम् ।
स्तुवन्नामसहस्रेण नित्यं भक्तिसमन्वितः॥१२९॥

जो पुरुष भक्तिसम्पन्न होकर इस विष्णुसहस्रनामसे पुरुषोत्तम भगवान्की प्रतिदिन स्तुति करता है, वह शीघ्र ही समस्त संकटोंसे पार हो जाता है ॥ १२९ ॥

वासुदेवाश्रयो मर्त्यो वासुदेवपरायणः ।
सर्वपापविशुद्धात्मा याति ब्रह्म सनातनम् ।१३०।

जो मनुष्य वासुदेवके आश्रित और उनके परायण है, वह समस्त पापोंसे छूटकर विशुद्ध अन्तःकरणवाला हो सनातन परब्रह्मको पाता है ॥ १३० ॥

न वासुदेवभक्तानामशुभं विद्यते क्वचित् ।
जन्ममृत्युजराव्याधिभयं नैवोपजायते ॥१३१॥

वासुदेवके भक्तोंका कहीं कभी भी अशुभ नहीं होता है तथा उनको जन्म, मृत्यु, जरा और व्याधिका भी भय नहीं रहता है ॥ १३१ ॥

इमं स्तवमधीयानः श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ।
युज्येतात्मसुखक्षान्तिश्रीधृतिस्मृतिकीर्तिभिः१३२

जो पुरुष श्रद्धापूर्वक भक्तिभावसे इस विष्णुसहस्रनामका पाठ करता है, वह आत्मसुख, क्षमा, लक्ष्मी, धैर्य, स्मृति और कीर्तिको पाता है ॥ १३२ ॥

न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभा मतिः ।
भवन्ति कृतपुण्यानां भक्तानां पुरुषोत्तमे ॥१३३॥

पुरुषोत्तमके पुण्यात्मा भक्तोंको किसी दिन क्रोध नहीं आता, ईर्ष्या उत्पन्न नहीं होती, लोभ नहीं होता और उनकी बुद्धि कभी अशुद्ध नहीं होती ॥ १३३ ॥

द्यौः सचन्द्रार्कनक्षत्रा खं दिशो भूर्महोदधिः ।
वासुदेवस्य वीर्येण विधृतानि महात्मनः ॥१३४॥

स्वर्ग, सूर्य, चन्द्रमा तथा नक्षत्रसहित आकाश, दस दिशाएँ, पृथ्वी और महासागर—ये सब महात्मा वासुदेव-के वीर्यसे धारण किये गये हैं ॥ १३४ ॥

ससुरासुरगन्धर्वं सयक्षोरगराक्षसम् ।
जगद्वशे वर्ततेदं कृष्णस्य सचराचरम् ॥१३५॥

देवता, दैत्य, गन्धर्व, यक्ष, सर्प और राक्षससहित यह स्थावर-जङ्गमरूप सम्पूर्ण जगत् श्रीकृष्णके अधीन रहकर यथायोग्य बरत रहे हैं ॥ १३५ ॥

इन्द्रियाणि मनो बुद्धिः सत्त्वं तेजो बलं धृतिः ।
वासुदेवात्मकान्याहुः क्षेत्रं क्षेत्रज्ञ एव च ॥१३६॥

इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, सत्त्व, तेज, बल, धीरज, क्षेत्र (शरीर) और क्षेत्रज्ञ (आत्मा)—ये सब श्रीवासुदेवके रूप हैं, ऐसा वेद कहते हैं ॥ १३६ ॥

सर्वागमानामाचारः प्रथमं परिकल्पते ।
आचारप्रभवो धर्मो धर्मस्य प्रभुरच्युतः ॥१३७॥

सब शास्त्रोंमें आचारको प्रथम माना जाता है, आचारसे ही धर्मकी उत्पत्ति होती है और धर्मके स्वामी भगवान् अच्युत हैं ॥ १३७ ॥

ऋषयः पितरो देवा महाभूतानि धातवः ।
जङ्गमाजङ्गमं चेदं जगन्नारायणोद्भवम् ॥१३८॥

ऋषि, पितर, देवता, पञ्च महाभूत, धातुएँ और स्थावर-जङ्गमात्मक सम्पूर्ण जगत्—ये सब नारायणसे ही उत्पन्न हुए हैं ॥ १३८ ॥

योगो ज्ञानं तथा सांख्यं विद्याः शिल्पादि कर्म च ।
वेदाः शास्त्राणि विज्ञानमेतत्सर्वं जनार्दनात् १३९

योग, ज्ञान, सांख्य, विद्याएँ, शिल्प आदि कर्म, वेद, शास्त्र और विज्ञान—ये सब विष्णुसे उत्पन्न हुए हैं ॥ १३९ ॥

एको विष्णुर्महद्भूतं पृथग्भूतान्यनेकशः ।
त्रींल्लोकान्व्याप्य भूतात्मा भुङ्क्ते विश्वभुगव्ययः ॥

वे समस्त विश्वके भोक्ता और अविनाशी विष्णु ही एक ऐसे हैं, जो अनेक रूपोंमें विभक्त होकर भिन्न-भिन्न भूतविशेषोंके अनेकों रूपोंको धारण कर रहे हैं तथा त्रिलोकीमें व्याप्त होकर सबको भोग रहे हैं ॥ १४० ॥

इमं स्तवं भगवतो विष्णोर्व्यासेन कीर्तितम् ।
पठेद्य इच्छेत्पुरुषः श्रेयः प्राप्तुं सुखानि च ।१४१।

जो पुरुष परम श्रेय और सुख पाना चाहता हो, वह भगवान् व्यासजीके कहे हुए इस विष्णुसहस्रनामस्तोत्रका पाठ करे ॥ १४१ ॥

विश्वेश्वरमजं देवं जगतः प्रभवाप्ययम् ।
भजन्ति ये पुष्कराक्षं न ते यान्ति पराभवम्१४२

जो विश्वके ईश्वर जगत्की उत्पत्ति, स्थिति और विनाश करनेवाले जन्मरहित कमललोचन भगवान् विष्णुका भजन करते हैं, वे कभी पराभव नहीं पाते हैं ॥ १४२ ॥



ॐ तत्सदिति श्रीमहाभारते शतसाहस्र्यां संहितायां वैयासिक्यामानुशासनिके पर्वणि भीष्मयुधिष्ठिर-संवादे श्रीविष्णोर्दिव्यसहस्रनामस्तोत्रम्





मिलनेका पता—
गीताप्रेस, पो० गीताप्रेस (गोरखपुर)